INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI No. 64884/96

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीअै एकु एकु वखाणीअै।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीअै।।

आत्म मार्ग

March 2019

समस्त श्रद्धालुजनों को होला-महल्ला के उपलक्ष्य में कोटि-कोटि शुभाशीर्वाद

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी नगर ' धमोट ' (लुधियाना) में ' वार्षिक गुरमति समागम ' के अवसर पर कीर्तन द्वारा संगत को कृतार्थ करते हुए

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक दूसरा, मार्च 2019

गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

मुख्य सम्पादक
डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/-	(For outstation cheques)

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,
भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर
98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

3. बिनु सबदै अंतरि आनेरा 15
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. पड़िअै नाही भेदु बुझिअै पावणा 25
सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. नानक लेखै इक गल ... 35
सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

6. नूरानी मिलाप - 9 39
भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

7. गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' 41
डा. जगजीत सिंह

8. गुरबाणी अर्थ भण्डार 45
सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

9. खालसाई जाहो-जलाल तथा बुलन्दावस्था का प्रतीक - होला महल्ला 47
डा. गुरविंदर कौर

10. भाई नन्द लाल जी 51

11. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 53
डा. स्वामी राम जी

12. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 55

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

प्यारे पाठकजनो!

फरवरी माह के अंक में आप जी के साथ 'दृष्टि भेद' के बारे में विचार साझे किए थे। इसी विचार को आगे बढ़ाते हुे, प्रस्तुत अंक में से तुच्छ बुद्धि के अनुसार, गुरवाणी की रौशनी में, इस विषय पर अगली विचार साझी की जा रही है। वास्तव में 'दृष्टि भेद' मनुष्य के अन्दर बस रहे संसार के प्रतिफल स्वरूप ही है। किसी भी वस्तु, व्यक्ति या शक्ति को हम किस दृष्टिकोण से देखते हैं, यह हमारे अन्दर बस रहे संसार यानि कि मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव पर निर्भर करता है। जितना किसी का मन निर्मल है, उतनी ही उसकी दृष्टि निर्मल है। इस मन को जन्म-जन्मान्तरों की मैल लगी हुई होने के कारण इसका निर्मल होना कोई सरल खेल नहीं है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी
काला होआ सिआहु ॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु ॥
अंग - 651

मैले मन को मैला ही दिखाई पड़ेगा। जिस प्रकार का किसी के चश्मे का रंग है, उसी प्रकार का संसार उसे दिखाई पड़ता है। हरे, लाल, पीले इत्यादि चश्मों के रंगों में से, अलग-अलग रंगों में रंगा हुआ संसार दिखाई पड़ेगा। क्या कोई ऐसा रंग भी है जो कि वाहिगुरू जी को अच्छा लगता है? आओ! हम विचार का हल हम गुरवाणी में से ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं। परमात्मा स्वयं एक से अनेक रंगों में खेल रहा है -

आपे हरि इक रंगु है आपे बहु रंगी ॥
जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी ॥ 22 ॥ 2 ॥
अंग - 726

अनेकता में एकता विद्यमान है -

अमान हैं॥ निधान हैं॥
अनेक हैं॥ फिरि एक हैं॥ (जापु साहिब)

'रंग परंग उपारजना' का शाश्वत सिद्धान्त संसार के अन्दर व्याप्त है। सारी सृष्टि में वह स्वयं ही विद्यमान है। सवाल उत्पन्न होता है कि फिर वह दिखाई क्यों नहीं पड़ता है? सबको दिखाई क्यों नहीं पड़ता है? इसका जवाब इसी प्रश्न में से मिल रहा है। वह हमें इसीलिए दिखाई नहीं पड़ता है क्योंकि हमारे पास न तो उसे देखने वाली आँख है और न ही उसे सुनने वाले कान हैं तथा न ही हमारे पास उसे महसूस करने वाला दिव्य स्पर्श ही है। अतः जब हमें दिव्य नेत्र व कान प्राप्त हो गए तो -

नानक से अखड़ीआँ बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी॥
अंग - 577

जब समर्थ सतगुरू ने ज्ञान का सुर्मा डाल दिया तो -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥
अंग - 293

फिर यही ऐसा उप परम शक्ति का नूर दिखाई पड़ेगा-

एहु विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रुपु है हरि रुपु नदरी आइआ ॥
अंग - 922

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता ॥
तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥ अंग - 610

ना को मूरखु ना को सिआणा ॥
वरतै सभ किछु तेरा भाणा ॥ अंग - 98

समर्थ सतगुरू द्वारा प्रदत्त ज्ञान रूपी नेत्रों वाली ऐनकों के द्वारा देखने से फिर दूसरा तो कोई दिखाई ही नहीं पड़ता है और यही 'आत्म मार्ग' का लक्ष्य है यानि कि यही मंजिल-ए-मकसूद है और इसी को आत्म मार्ग कहा जाता है।

इस सिद्धान्त की पुष्टि और भी अधिक अच्छे ढंग से हो जाती है जिस समय हम श्री गुरू नानक देव जी द्वारा भूटान की संगत पर की गई कृपा को याद करते हैं। भूटान की संगत ने सतगुरू जी को गृहस्थ जीवन में रहते हुए अपने उद्धार का रास्ता पूछा कि महाराज जी! क्या हम गृहस्थियों का भी उद्धार हो सकता है?

महाराज जी ने कृपा करते हुए वचन किए कि क्यों नहीं? तुम लोग तो प्राथमिकता के आधार पर हो और गुरमति का तो मार्ग ही यही है -

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ॥ सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥

अंग - 938

श्री गुरू नानक देव जी का मार्ग ही सुरति शब्द का मार्ग है। घर में रहते हुए और सारे उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए ही उसकी प्राप्ति करनी है -

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति ॥
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ
विचे होवै मुकति ॥ *अंग - 522*

केवल पूरी युक्ति की आवश्यकता है -

उदमु करेदिआ जीउ तूं कमावदिआ सुख भुंचु ॥
धिआईदआ तूं प्रभू मिलु नानक उतरी चिंत ॥

अंग - 522

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संम्हालि ॥
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजनु नालि ॥

अंग - 1376

सतगुरू सच्चे पातशाह जी ने उन्हें मुक्ति का सरल मार्ग बतलाते हुए पूरी युक्ति सविस्तार बतलाई। आपने कहा, प्रेमीजनो! आपने दृष्टि भेद को समझना है। दृष्टि दो प्रकार की होती है। एक होती है शेर दृष्टि और दूसरी होती है कुत्ता दृष्टि। देखो! शेर हमेशा वार करने वाले पर अपनी दृष्टि को रखता है न कि वार करने के साधन पर। शेर कभी भी गोली आदि पर आक्रमण नहीं करता है बल्कि जहाँ से गोली आ रही है, वह उस जगह पर अपनी निगाह को टिकाता है। दूसरी तरफ कुत्ता हमेशा वार करने के साधन जैसे कि ढण्डा, रोड़ा या ईंट, ढेले पर अपनी दृष्टि को केन्द्रित करते हुए उसी पर वार करता है। वह कभी भी वार करने वाले पर अपनी दृष्टि को नहीं टिकाता है। यहाँ पर समझने वाली बात यह है कि इस मण्डल में देनहार दातार केवल परमात्मा है -

ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार ॥
देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार ॥ अंग - 257

देदा दे लैदे थकि पाहि ॥
जुगा जुगंतरि खाही खाहि ॥ *अंग - 2*

तू दाता दातारु तेरा दिता खावणा ॥ *अंग - 652*

कोटि ब्रहमंड को ठाकुरु सुआमी
सरब जीआ का दाता रे ॥ *अंग - 612*

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥

अंग - 2

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु ॥
देवन कउ एकै भगवानु ॥ *अंग - 281*

हमने अपनी दृष्टि को इस संसार से हटाकर उस देनहार-दातार पर रखना है न कि उस परमात्मा द्वारा प्रदत्त पदार्थों में ही लिप्त हो जाना है। हमने धन पदार्थ का प्रयोग संयम में रहते हुए करना है, लेकिन अपनी दृष्टि को, सदैव संसार के पीछे विद्यमान उस अलौकिक शक्ति या परमात्मा पर रखते हुए जीवन निर्वाह करना है। मुक्ति का यही सरल मार्ग है। लेकिन इस दृष्टि का प्राप्त हो पाना मनुष्य के अपने वश में नहीं है। नि:शुल्क रूप से यह बहुत ही सरल मार्ग है लेकिन पूर्ण सतगुरू जी की कृपा के बिना यह कठिन भी बहुत है। हमने मेहनत, उद्यम, प्यार व वैराग्य की बदौलत सतगुरू जी की कृपा का पात्र बनना है।

विगत कई जन्मों के संस्कार इस जीव के अन्त:करण में जमा पड़े हुए हैं जो कि इसके अगले मार्ग को तय करते हैं। रजो, तमो व सतोगुणी लहरें प्रत्येक समय इसके ऊपर प्रभाव डाल रही है -

करणी कागदु मनु मसवाणी बुरा भला दुइ लेख पए॥
जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऐ
तउ गुण नाही अंतु हरे ॥ *अंग - 990*

हमारे अन्त:करण के अन्दर. जो कि मन, चित्त, बुद्धि व अहंभाव का समिश्रण है, अच्छे व बुरे ख्यालों के संस्कार विगत करोड़ों जन्मों के पड़े हुए है और वर्तमान समय में भी उन संस्कारों का प्रभाव हमारे अन्त:करण पर पड़ रहा है। इन समस्त संस्कारों के कारण ही जीव का स्वभाव बनता है और स्वभाव से ही इसके कर्म बन जाते हैं। संस्कारों का यह समूह जैसे-जैसे इसे प्रेरित करता है वैसे-वैसे यह कर्म करता चला जाता है। तभी तो गुरू जी हमें चेतावनी देते हुए प्रेरित करते हैं कि -

चित चेतसि की नही बावरिआ ॥
हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ ॥ *अंग - 990*

कर्मों की यह दृष्टि ही भेद का कारण बन रही है। फिर सच्चे पातशाह जी इस जीव पर दया करते हुए कृपा करते हैं कि ऐ प्रेमीपुरुष! तुम, गुरू चरणों में अरदास करो क्योंकि अरदास ही तुम्हारा मिलाप करवा सकती है, टूटी जोड़ सकती है, तुम्हारे हृदय रूपी मुरझाए हुए कमल के फूल को खिला सकती है और अरदास ही तुम्हारे जीवन के अन्दर, सुगन्ध को भर सकती है। इसी अरदास की बदौलत ही तुम्हारा मुरझाया हुआ, पतझड़ की भांति सूखा हुआ अन्त:करण दोबारा हरा-भरा, नया-नरोआ व खुशबूदार बन जाएगा -

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥

(शेष पृष्ठ 14 पर)

चेति

(चैत्र माह की संक्रान्ति - 14 मार्च, 2019 दिन वीरवार)

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

चेति गोविंदु आराधीअै होवै अनंदु घणा॥
संत जना मिलि पाईअै रसना नामु भणा॥
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणआ॥
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा॥
जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा॥
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा॥
जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा॥
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना॥
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा॥ *अंग - 133*

हमारे देश में चन्द्रमा की कलाओं के साथ सम्बन्ध रखने वाला देशी वर्ष चैत्र के महीने से शुरू होता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार हमारे बुजुर्ग, जिन्होंने अपने जीवन, आन्तरिक खोज में लगा दिए जिन्हें ऋषि मुनि, साधु, सन्त कह कर आदरपूर्वक सम्मानित किया जाता था, उनकी दृष्टि में सारी ही शक्तियां, आबोहवा, बैसन्तर, धरती, चाँद, सूरज सारे ग्रह सजीव रूप में प्रतीत दिखाई देते हैं, जिन्हें अलग-अलग तत्वों के अधिष्ठान देवता के नाम से पुकारा जाता था। उन ग्रहों की भी खोज की, उनका सम्बन्ध जीव के नित्य प्रति बीत रहे जीवन के साथ जोड़ा, उन ग्रहों, नक्षत्रों के प्रभाव मनुष्यों पर पड़ते हुये देखे, बेअन्त प्रयोग किये और ज्योतिष विद्या, खगोल विद्या ने जन्म लिया। भारत वर्ष में समय की बाँट के अनुसार दो-दो महीनों के समय गिन कर ऋतुएं बनाईं। इनसे सम्बन्धित दिन बनाए, उन दिनों का प्रभाव जीवन के साथ स्थापित किया तथा भले बुरे शकुनों का प्रभाव देख कर मनुष्य के जीवन के साथ सम्बंध बढ़ाया। इस प्रकार एक साधारण मनुष्य वातावरण के कितना अधीन है, इसकी भी जाँच परख की जिसके आधार पर प्रत्येक मनष्य की जन्म पत्री बनाई। यह एक विद्या थी जिसे 145 विद्याओं में गिना जाता था, ग्रहों से बचने के लिए धातुओं तथा पत्थरों, हीरे, जवाहरात, पदम, लसण वगैरा की खोज करके इन्हें कुचालक कह कर बताया। ये धातुएं और पत्थर ग्रहों के बुरे प्रभाव को खत्म करती थीं। इस तरह से जीवन की चाल हर मनुष्य में एक डर पैदा कर रही थी। वह नहीं जानता था कि कल क्या हो जाने वाला है? कौन से ग्रह का प्रभाव मेरे ऊपर चल रहा है? जिस प्रकार चिकित्सा विज्ञान को पता है कि मनुष्य की वृत्ति एक रस क्यों नहीं रहती, कभी इसका नाड़ी संस्थान पूरी तरह काम करता है, उछलता है, खुशियां मनाता है। बहुत उत्साह से जीवन व्यतीत करता है कि जब लगातार चिन्ता से नाड़ी संस्थान कमजोर पड़ जाये तो मनुष्य की स्मरण शक्ति में अन्तर पड़ जाता है। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता, कहीं भी जाने को उसका मन नहीं करता, किसी के साथ बातचीत करने को मन नहीं करता। अन्दर ही अन्दर लम्बे-लम्बे श्वास लेता है। उसके चेहरे पर उदासी के चिन्ह नजर आने लग जाते हैं। योग्य डाक्टर दवाई देते हैं, वातावरण बदलने की सलाह देते हैं। तीर्थों पहाड़ों या साधु सन्तों के दर्शन करने की सलाह देते हैं। व्यस्त जीवन बिताने की सलाह देते हैं और दवाई देकर उसे थोड़ी देर में ही खुश कर देते हैं। इसी प्रकार हमारे बुजुर्गों ने, जो दिन रात जंगलों में बैठकर आन्तरिक तथा प्राकृतिक प्रभावों की खोज में लगे रहते थे, उनके मतानुसार यह भी पता चल जाता था कि जब नया महीना शुरू होता है तो सूर्य अपनी चाल बदलता है, चन्द्रमा अपनी नई चाल का रास्ता अपनाता है, तो उस दिन जो महीना

शुरू होता है वह किसी महापुरुष से महीने का नाम सुनकर निश्चयपूर्वक यह समझ जाता था कि मेरे आने वाले महीने में जो विघ्न हैं, उनके प्रभाव बहुत कम ही पड़ेंगे और महीना सुख शान्ति से बीत जायेगा। गुरमत अनुसार इन ग्रहों, दिनों, नक्षत्रों के प्रभाव के मुकाबले में गुरू महाराज जी ने नाम शक्ति के साथ मेल का साधन बताया, नाम को हृदय में बसाने तथा गुरू का स्वरूप हृदय में धारण करने की ताकीद की। वाहिगुरु जी की परिपूर्णता के साथ सदा ही जुड़े रहना एक कवच बताया है जो किले का काम करता है, संयोग बनता है नाम जपने वाले पर कोई विघ्न हावी नहीं होता जैसा कि फुरमान है -

प्रभ सिमरत कछु विघनु न लागै।। *अंग - 262*

तथा इसके विपरीत जो नाम शक्ति के साथ जुड़ नहीं सकता, जिनके अन्दर अभी नाम धुन सुनाई नहीं दी, जो वाहिगुरु जी के अस्तित्व से अचेत हैं, जिन्होंने कोई गुरू नहीं धारण किया और गुरू से मन्त्र लेकर उसका जप नहीं करते और नाम की परिपूर्णता में विश्वास नहीं रखते उन्हें दिन, वार, महीने, ग्रह अपना प्रभाव हर हालत में दिखाते हैं। वह यत्न करता है पर विघ्नों का उभार उसकी पेश नहीं चलने देता। गुरू महाराज जी ने फरमान किया -

कोटि विघन तिसु लागते जिस नो विसरै नाउ।
नानक अनदिनु विलपते जिउ सुंञै घरि काउ।।

अंग - 524

इस प्रकार नाम के भूलने पर करोड़ों विघ्न व्याप्त जाते हैं। जब वाहिगुरु जी का नाम हृदय में बस जाये तो गुरु महाराज जी फरमाते हैं -

रामु जपहु वडभागीहो जलि थलि पूरनु सोइ।
नानक नामि धिआईऐ विघनु न लागै कोइ।।

अंग - 524

शोक की परछाईयां दूर हो जाती हैं। सभी मनोरथ पूरे हो जाते हैं, सुख, सहज तथा आनन्द की प्राप्ति हो जाती है यहाँ तक कि नाम जपने से जन्म-मरण भी समाप्त हो जाता है। वाहिगुरु जी में नाम का निवास हो जाता है जिसके बारे में फरमान है -

सिमरि सिमरि दातारु मनोरथ पूरिआ।
इछ पुंनी मनि आस गए विसूरिआ।
पाइआ नामु निधानु जिसनो भालदा।
जोति मिलि संगि जोति रहिआ घालदा।
सूख सहज आनंद वुठे तितु घरि।
आवण जाण रहे जनमु न तहा मरि।
साहिबु सेवकु इकु इकु द्रिसटाइआ।
गुरप्रसादि नानक सचि समाइआ।। *अंग - 524*

अतः गुरमत सिद्धान्त के अनुसार ग्रह, वार, तिथि उस जीवन पर अपना प्रभाव डालती हैं, जो परमेश्वर के नाम से टूटे हुये हैं। जिसके हृदय में नाम का वास हो गया उसे जो बरकतें प्राप्त होती हैं, उसके बारे में सुखमनी साहिब की पहली अष्टपदी में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। उस अष्टपदी पर विचार करने का कष्ट करो। हम यहाँ पर ज्योतिषि विद्या को गलत नहीं कहते, वह एक विद्या है, हिसाब है जो किसी समय में पूरी तरह से खोजी के हृदय में ज्ञान रखती थी पर समय के हेरफेर के साथ वह विद्या सही सूझ भी अपूर्ण रह गई, उसे भी कम्पयूटराइज कर दिया गया तथा छपे छपाये पर्चे कम्पयूटर का बटन दबाकर हाथ में पकड़ा देते हैं। यहाँ हमारे सामने समस्या यह नहीं है कि हम ज्योतिषि विद्या पर कोई, किन्तु आदि प्रश्न उठायें या उसकी मदद करें, गुरमत का जो सिद्धान्त है वह यह है कि नाम जपने वाले को विघ्नों से छुटकारा मिलता है तथा उसके मन की शुद्ध कामनायें पूर्ण हो जाती हैं।

प्रभु कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि।
प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु वुधि।

अंग - 262

नाम जपने वाला नाम के सहारे अपनी किस्मत बदल सकता है और जिस वस्तु को वह प्रभु से माँगता है वह उसे प्राप्त हो जाती है क्योंकि गुप्त शक्तियां उसकी आज्ञा में चलकर अपना भला चाहती हैं जैसा कि -

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि
जो हरि हिरदै सदा वसाइ। *अंग - 649*

तथा -

जो मागहि सोई सोई पावहि
सेवि हरि के चरण रसाइण। *अंग - 714*

अतः हमारा जहाँ तक सम्बन्ध है हम विश्वास रखते हैं कि नाम जपने से हमारे जीवन की चाल सुख से व्यतीत होती रहेगी। ग्रहों का डर हमें नहीं सतायेगा तथा न ही हमारे ऊपर प्रभाव डालेगा। हमें गुरु महाराज जी ने अनेक प्रकार के ग्रहों, व्रतों, जादू-टोनों आदि से छुटकारा दिला दिया। हमारे लिए महीने का नाम किसी पवित्र व्यक्ति से सुनना या न सुनना कोई बहुत प्रभावकारी नहीं है क्योंकि गुरसिक्ख के हृदय में सदा ही वाहिगुरु जी की पवित्र हस्ती का निवास रहता है, वह सत चित्त ऊर्जा अपने प्यारे के चारों ओर राम कार खींच कर रखती है। उसे कोई भी गर्म हवा का झोंका दुःख नहीं

दे सकता -

ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई॥
चउगिरद हमारै राम कार दुखु लगै न भाई॥
सतिगुरु पूरा भेटिआ जिनि बणत बणाई॥
राम नामु अउखधु दीआ एका लिव लाई॥
राखि लीए तिनि रखनहारि सभ बिआधि मिटाई॥
कहु नानक किरपा भई प्रभ भए सहाई॥ अंग - 819

गुरू दशमेश पिता जी गुरू के साथ जुड़े हुये जिज्ञासु पर गुरु की कृपा का विवरण देते हुये फुरमान करते हैं -

रोगन ते अर सोगन ते जल जोगन ते बहु भांति बचावै॥
सत्रु अनेक चलावत घाव तऊ तन एक न लागन पावै॥
राखत है अपनो कर दै कर पाप समूंह न भेटन पावै॥
और की बात कहा कह तो सों, सु पेट ही के पट बीच बचावै॥ अकाल उस्तति

गुरु शक्ति, वाहिगुरु शक्ति जो एक ही रूप है, जिनके चारों ओर इन शक्तियों की लक्ष्मण रेखा खिंच जाती है वे विघ्नों से रहित हो जाते हैं। गुरु पांचवें पातशाह जी ने बारह माहे का उच्चारण इसलिये नहीं किया कि महीने का नाम कोई भला पुरुष संगत को सुनाये, इसके विपरीत बारह माह एक गूढ़ दर्शन शास्त्र है, एक जीव की परम पद तक पहुँचने की प्रतीक्षा है। जिज्ञासुओं के लिये गाढ़ी राह है। जिसे शनै-शनै हर महीने विचारते हुये हम आखिरी महीने में -

फलगुणि अनद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ।
अंग - 136

महान बरकतों से भरपूर मिलाप में पहुँच कर दो से एक रूप हो सकते हैं। बारहमाह की विचार महीने के अनुसार सुनना फिर महीना भर अन्तरंग संगत करना। धीरे-धीरे इस अटूट मन को नाम में लगाकर बैराग द्वारा प्रभु के प्यार में जोड़ना और प्रभु मिलाप में पहुँच कर द्वै से एक रूप हो जाना - यह उद्देश्य है बारहमाह का।

सो आप 12 महीनों के साथ पहले भी गुरु शबद द्वारा उद्देश्य प्रकट करते हैं तथा बारह महीनों के उपदेशों में से गुजरने के पश्चात आप फरमान करते हैं कि -

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे।
अंग - 136

यह फल बताते हैं इस लम्बी विचार को हृदय में धारण करने का। जिन्होंने पूर्ण गुरु की आराधना की है वे दरगाह में खोटे नहीं कहे जायेंगे, खरे कहलायेंगे और सुखों का खजाना उन्हें प्राप्त हो जाता है, जिन्होंने वाहिगुरु जी के चरणों में शरण ले ली, उन्होंने प्रेमा भक्ति प्राप्त कर ली। माया की अग्नि में नहीं जले, उनकी झूठ की हउमै रूपी दीवार तथा दुवधिा का नाश हो गया तथा पूर्ण सच में अपनी हउमै छोड़ कर समा गये। यह प्राप्ति उन्हें ही होती है जिन पर गुरु की कृपा हो जाती है, वाहिगुरु जी की कृपा हो जाये फिर -

माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे।
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे।। अंग - 136

कह कर आप एक लम्बी फिलासफी में आये सिद्धान्तों की ओर ध्यान दिलाते हैं। बारहमाह के आरम्भिक शब्द में फुरमान करते हैं -

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम।
अंग - 133

संसार की रचना के आरम्भ में वाहिगुरु जी अपने आप से ही अनेक हुये हैं। एकंकार की साकारता धारण करने के उपरान्त हुक्म की क्रिया शुरू हुई, इस हुक्म के अधीन खण्डों-ब्रह्मांडों, तत्वों, देवी-देवताओं, सूक्ष्म स्थूल, जगत की उत्पत्ति हुई। इस धरती पर चार जीवित भागों में जीवन यात्रा शुरू की जिन्हें अन्डज़, जेरज, सेतज, उत्भुज कहा जाता है। प्रभु हुक्म में ही सारे आकार अस्तित्व में आये तथा उसी हुक्म के अनुसार अनन्त प्राणों में चेतना जागृति अनुभव हुई, जिससे वह निरंकारी किरण या निरंकारी चेतन बूंद प्रकृति के साथ मिलकर तीन गुणों रजो गुण, तमो गुण, सतो गुण के अधीन क्रियाशील होकर जिन्हें जीव की उपाधि दी गई-

हुकमी होवनि आकारु हुकमु न कहिआ जाई।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई।। अंग - 1

गुरवाणी में फुरमान आता है कि इस जाग्रत ज्योति के प्रकृति के साथ प्रतिबिम्बित मिलाप के कारण जड़ चित्त मे चेतनता उत्पन्न हुई और उसने अपने अस्तित्व को अलग अनुभव किया। इस प्रभाव को हउमै का नाम दिया गया। हउमै तथा हुक्म दोनों शक्तियां प्रभु की हैं। हउमै तत्व ने आकाश की निर्मल चेतनता को प्रकृति के साथ मिला दिया। परमेश्वर से वियोग कर दिया।

कबीर निरमल बूंद अकास की परि गई भूमि बिकार॥
बिनु संगति इउ मांनई होइ गई भठ छार॥अंग - 1375

वाहिगुरु जी से बिछुड़ कर प्रकृति ही अपने आपको समझने लगी। अनन्त से अलग होकर यह उत्तम ज्योति जीव कहलायी। पाँच पर्दे इसके ऊपर लिपट गये। पहला पर्दा आनन्द का था जिसमें अज्ञान की उत्पत्ति होकर अपने अलगपन का ज्ञान हुआ, इसे आनन्दमयी कोष कहा जाता

है। प्रकृति के धक्के से यही चेतन सत्ता नीचे लुढ़की और उसमें निर्णय शक्ति पैदा हो गई जिसे विज्ञानमयी कोष कहा जाता है। इस अवस्था में से फिर धक्का लगा तो और नीचे खिसकना पड़ा। अब यह फुरनों (विचारों) के मण्डल में घिर गई, अनेक प्रकार के विचार, अनेक प्रकार की रचनाओं का अनुभव इसकी सुरत को घेरे खड़ा था। इस अवस्था में से उसी परम ज्योति को बूंद को मनोमई कोष ने पूरी तह से अपनी घेरेबन्दी में ले लिया। और धक्का खाया, यही सूक्ष्म तत्व, प्राण शक्ति से मिल गया। प्रकृति में से तत्व लेकर यह प्राण में से और नीचे खिसका तथा पाँच तत्वों में मिल गया, एक नई शक्ल, नया रूप देखा। यह रूप उड़ानें नहीं भर सकता था, यह रूप बन्धन में था, वातावरण के अनुसार यह सुरत बन्धनों में लिपट गई और यह अपने आप को पूरी तरह से भूल कर साढ़े तीन हाथ की देह मानने लग गई। इसे ही 'मैं' कहने लग गया। लाख यत्न करने पर भी यह अपने असली रूप को नहीं पहचानता। इस जीव का मौलिक स्वरूप पूरी तरह से अगम, अचाह, निर्लेप है। केवल उसका प्रतिबिम्ब शक्ति सहित, सूझ सहित नीचे खिसका और शरीर बन गया। इसे यह ज्ञान न रहा कि पहली अवस्था में जब मुझे आत्म मण्डल में से प्रकृति ने फैंका और आत्मा का प्रतिबिम्ब जागृत देकर आनन्द कहलवाया, उस समय उसकी उपाधि जीव की हो गई। जो आनन्दमयी कोष में घिरी धीरे-धीरे आनन्दमयी कोष में फंस कर अपना स्वरूप भूल गई। स्वरूप तो इस आत्मा का था पर यह हउमै के प्रभाव में जाकर अपनी सुरत खो बैठा। अपने आपको वाहिगुरु से अलग जीव समझने लग गया। यह जीव शरीर से मिलकर अपने आपको शरीर तथा शरीर का ही रखा हुआ नाम समझने लग पड़ा। इस शरीर में प्रवेश करके अपने आपको शरीर समझ कर इसने अच्छे तथा बुरे कर्म करने शुरू कर दिये, जिनमें से कुछ को शुभ कर्म कहा जाता है, और कुछ को अशुभ कर्म कहा जाता है। जीव को बान्धने के लिए दोनों ही हथकड़ियां हैं, एक सोने की हथकड़ी है, दूसरी लोहे की है। सोने की हथकड़ी इसे गोते लगवाती हुई स्वर्ग लोकों में निवास करवा देती है और लोहे की हथकड़ी नरकों में फैंक देती है। इसकी सुरत को नीचे की ओर धक्का मार कर पशुओं, पंछियों, निषिद्ध योनियों में शरीर धारण करवा देती है -

कई जनम भए कीट पतंगा॥
कई जनम गज मीन कुरंगा॥
कई जनम पंखी सरप होइओ॥
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ॥
चिरंकाल इह देह संजरीआ॥
कई जनम सैल गिरि करिआ॥
कई जनम गरभ हिरि खरिआ॥
कई जनम साख करि उपाइआ॥
लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ॥ *अंग - 176*

अतः इस प्रकार यह निर्मल बूंद आत्म तत्व के कर्मों से बन्धी हुई कलाबाजियां लगाती है तथा अनन्त काल से इसका वाहिगुरु जी से वियोग हो गया। यह तब तक स्थिर नहीं हो सकती जब तक इसका मिलाप वाहिगुरु जी के साथ नहीं होता। इस जीव ने अपनी भटकन का अनुभव किया तथा इन भटकनों में महसूस किया कि जितनी उड़ानें मैं भरता हूँ उतने ही दुःख मेरे सामने आ जाते हैं जिसके बारे में महाराज जी फुरमान करते हैं -

पंखी बिरख सुहावड़े ऊडहि चहु दिसि जाहि॥
जेता ऊडहि दुख घणे नित दाझहि तै बिललाहि॥
अंग - 66

यह माया के जाल में पूरी तरह से फंस गया। अब इसे निकलने का कोई साधन नहीं दिखाई देता।

माइआ जालु पसारिआ भीतरि चोग बणाइ।
त्रिसना पंखी फासिआ निकसु न पाए माइ। अंग - 50

अतः यह है इतिहास, यह है सफर उस निर्मल बूंद का, जो प्रकृति से मिलकर अपने आप को प्रकृति का अंश समझने लग पड़ी। इसे मनुष्य का शरीर प्राप्त हुआ, अपनी दुदर्शा का ज्ञान हुआ और यह पता चला कि मेरी भटकन प्रभु का ज्ञान प्राप्त किये बिना दूर नहीं हो सकती। रो-रो कर पुकार करने लगा, हे प्रभु! मुझ पर कृपा करो, मुझे अपनी दरगाह में वास दो, मेरी 'मैं' को पूरी तरह मिटा दो, इस 'मैं' ने धोखे दिये हैं, इस 'मैं' ने ही नरकों में कलाबाजियां खिलानी हैं। हे प्रभु! अब मुझे अपने साथ मिला दे। ऐसा प्यारा कोई मिला जो तेरे साथ मेल करा दे। मेरा जो स्वभाव है, जिसे किरत कहते हैं मैं उसके अधीन बेबस हूँ। मैं कर्म करता हूँ और मैं जानता हूँ कि क्या कर्म करता हूँ, इसके बारे में फरमान है -

जब इह जानै मै किछु करता॥
तब लगु गरब जोनि महि फिरता॥
जब धारै कोऊ बैरी मीतु॥
तब लगु निहचलु नाही चीतु॥
जब लगु मोह मगन संगि माइ॥
तब लगु धरमु राइ देइ सजाइ॥ *अंग - 277*

अतः अब मुझ पर कृपा कर, मेरी भटकन मिट जाये। मैं थक गया हूँ, 84 लाख योनियों के मैं करोड़ों चक्कर काट चुका हूँ, अति दुखी हो गया हूं, मैं तेरी शरण में आ पहुँचा हूँ। मेरी हालत उस गाय जैसी है जो दूध नहीं देती। वह बेकार समझी जाती है क्योंकि न तो वह हल खींच सकती है, न गाड़ी खींच सकती है और न ही कोई कार्य कर सती है। मैं उस वृक्ष जैसा हूँ जिसे कोई फल नहीं लगता जिसकी जड़ों को बेअन्त समय से पानी नहीं मिला, उसकी शाखायें मुरझा गईं, उसकी सुन्दरता समाप्त हो गई। मुझे प्रभु नहीं मिला, मेरा जीवन निष्फल है, मैं माया के रसों-कशों में खिंचा रहा। वह माया मेरी मित्र नहीं थी, वह नागिन है जिसने मुझे मोह लिया और मुझे तेरे से अलग किए रखा।

तेरे मिलाप के बिना और कोई टिकाना नहीं। मेरी भटकन, मेरी उड़ानें, मेरी 84 लाख यौनियों में कला बाजियां, तभी बन्द होंगी यदि तेरा मिलाप हो जाये, जिस शरीर के अन्दर तू साक्षातकार न हो सका, वह शरीर जला हुआ है, तृष्णा की आग की लपटों ने उसे जला दिया और राख की तरह बना दिया है। इस भट्ठी हो चुके शरीर में चैन कहाँ से आयेगी, कहाँ से सुख उत्पन्न होना है? हे प्रभु! यदि तू मेरे चित्त में नहीं समाता तो मेरी हालत उस कीड़े जैसी है जो गन्दगी के ढेर में पड़ा झुलसता जा रहा है। मेरे द्वारा तेरे मिलाप के लिये किये गये भेष दिखावटीपन, तेरे मिलाप में मेरा कोई साथ नहीं दे रहे, सभी कच्चे हैं, बेकार हैं, मेरी भटकन नहीं मिटा सकते। दुनियां को मैं धोखा दे रहा हूँ - भेष बना बना कर लेकिन मुझे पता है तू इन भेषों पर रीझता नहीं क्योंकि ये सभी बदबूदार हैं। इन पर माया का चक्र चढ़ा हुआ है -

इहु तनु माइआ पाहिआ पिआरे लीतड़ा लबि रंगाए॥
मेरै कंत न भावै चोलड़ा पिआरे किउ धन सेजै जाए॥
अंग - 722

अतः मेरी हालत गन्दगी के कीड़े जैसी है। दुनियां मुझे अमीर कहती है पर जब तक तू हृदय में नहीं बसता मैं ही जानता हूँ कि मैं कितना दुखी हूँ क्योंकि तेरे नाम के बिना शान्ति का नाम लेना अपने आपको धोखे में रखना है जैसा कि तेरा फरमान है -

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे॥
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे॥
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे॥
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे॥
बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥
अंग - 707

दुनियां में अपने स्वार्थ हित में बन्धे हुये पुत्र-पुत्रियां, रिश्तेदार, सज्जन, मित्र ये कोई भी रस नहीं देते। इनकी मनौतियों में फंस कर मनुष्य गिर जाता है, रिश्वत लेता है, धोखे करता है, अविश्वास करके दुनियां को फंसाता है, अकृतघ्नता के साथ माया इकट्ठी करता है, लक्ष्य क्या होता है कि मेरे पुत्र, पुत्रियां, मेरे एकत्र किये गये धन का प्रयोग करें। पर पातशाह! ये तो यमदूत बन गये तथा अन्त समय में यमदूतों के वश पड़ कर दुखी होऊंगा। हे प्रभु! मैं बेबस तथा लाचार (बलहीन तथा बुद्धिहीन) जीव हूँ, मुझे ज्ञान नहीं पर मुझे यह पता है कि तू दयालु है, पतित पावन है, जो तेरी शरण आ जाते हैं, उन पर तू कृपा भरी दृष्टि रखता है। तूने ही गनिका जैसी पापिन को अपने नाम की लगन लगा कर उत्तम पदवी दी। तूने ही कौड़े जैसे आदमखोर राक्षसों पर कृपा करके नाम के रस की फुहार का आनन्द दिया। तूने ही सज्जन ठग जैसों को भाई सजण बना कर नाम खुमारी में प्रवृत्त किया। हे प्रभु! मैं भी तेरी शरण में सच्चे दिल से आया हूँ। मैं तो प्रार्थना ही कर सकता हूँ -

सदा सदा सदा दइआल।
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल। *अंग - 275*

कि तू मुझ पर कृपा कर। मैं तेरे पास प्रार्थना करता हूँ कि तू मुझे अपना पवित्र नाम बख्श दे। हे गुरु महाराज तू ही निरंकार का रूप है, तेरे बिना आज तक और किसी को भी तेरी प्राप्ति नहीं हुई, तूने मेरे दुखों की कहानी सुनी है, मुझ पर कृपा करो, मुझ पर कृपा करके जो प्रभु मेरे अंग संग बसता है, उसे मेरे साथ मिला कर निश्चल घर का वासा करवा दे। यह जो ऊपर सारे तरले किये गये हैं, उनका सार अंश इस प्रकार है -

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम॥
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम॥
धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै का॥।
जलु बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम॥
हरि नाह न मिलीअै साजनै कत पाईअै बिसराम॥
जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम॥
स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम॥
प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम॥
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु॥
हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम॥
अंग - 133

गुरू ने इस भटकते हुये बलहीन, बुद्धिहीन जीव की

प्रार्थना सुनी और इसकी अधोगति का अनुभव करते हुये, अति कृपालता धारण करते हुये फरमान किया कि हे जीव! तेरे तरले, तेरे रोने पुकारने इसलिये हैं कि तू माया की आराधना करता रहा है। माया ने तुझे सदा ही धोखा दिया है। यह नागिन है, इसकी जो भी सेवा करता है, उसे खा जाती है। अब तू ध्यान लगा कर सुन, तुझे मानस जन्म प्राप्त हुआ है। इस जन्म में तू गोबिंद की आराधना कर, तो तुझे सत्त-चित्त-आनन्द प्राप्त हो सकता है। जीव ने उपदेश सुना, मन में कुछ ढांढस बंधी, ठण्डी आह भरी और आशा बन्धी कि मेरे दुखों का छुटकारा गुरु के बचन सुन कर हो जायेगा। मैं इस भव सागर के दुःख के भंवरों में निकल कर किसी किनारे जा लगूँगा क्योंकि फरमान है -

संतहु सागरु पारि उतरीऐ।
जे को वचनु कमावै संतन का सो गुर परसादी तरीऐ।
अंग - 747

उस समय जीव ने अति अधीनगी के साथ प्रार्थना की कि मुझे आराधना का कोई भी ज्ञान नहीं है, आप फरमान करते हो कि वह वाहिगुरु घट-घट में व्याप्त है, मेरे अन्दर भी है, बाहर भी है मैं उसकी आराधना कैसे करूँ? मैं उसे कैसे अपने अन्दर बसाऊँ? उस समय सतगुरु की आवाज आई कि हे जीव! वाहिगुरु जी ने संसार पर बहुत ही दया करके अपने प्रेमीजनों को शुभ कार्य सौंपा है, भटकती रूहों को जो मेरे से अनन्त काल से बिछुड़ी हुई रो रही है, सिसक रही है, उन्हें मेरे साथ मिलाने के लिये मार्ग प्रदर्शन करो। उन्हें सन्त कह लो, पीर कह लो, गुरु कह लो, वह तेरी भावना है, वह तो वाहिगुरु द्वारा भेजे हुये पुरुष होते हैं और संसार में आते ही इसलिये हैं कि बिछड़ी रूहों को प्रभु के साथ मिला दें जिनके बारे में फरमान है -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए।
जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए।।
अंग - 749

अतः इसलिये तुझे रसना के साथ वाहिगुरु का नाम जिसे गुरु मन्त्र कहते हैं, वह उच्चारण करना पड़ेगा क्योंकि जिस अवस्था में अब तू रहता है, तू अपने आप को शरीर समझता है, हम इसे अन्नमयी कोष कहते हैं, तू इसमें से निकल नहीं सकता, जब तक इसका शुभ इन्द्रियों के साथ बार-बार मन्त्र का जाप नहीं करता और शरीर से सत्संग, सेवा नहीं करता, जिसके बारे में फरमान है -

बारंबार बार प्रबु जपीऐ।
पी अंम्रितु इहु मनु तनु धपीऐ। *अंग - 286*

सो यह विधि है। जब नाम तेरे अन्दर रसना में बस गया तब तू श्वास के साथ नाम जप -

सासि सासि सिमरहु गोविंद।
मन अंतर की उतरै चिंद। *अंग - 295*

परमेश्वर के प्यारे तुझे रास्ता बताते रहेंगे। तेरा काम है उन पर पूर्ण विश्वास रखना और उनके वचनों की कमाई करना। धीरे-धीरे वे तुझे सारी युक्तियां बता कर प्रभु के साथ मिलाप करा तेंगे, तेरे पास शरीर की सुन्दरता, माया, ऊँची पदवियां, परिवार के सदस्य, पुत्र, पुत्रियां नाम के मुकाबले में कुछ भी महत्व नहीं रखतीं। संसार में आना उसका सफल माना जाता है, जिसकी रसना में से हर समय प्रभु के नाम का उच्चारण होता रहता है।

आइआ सफल ताहू को गनीअै।।
जासु रसन हरि हरि जसु भनीअै।।
आइ बसहि साधु कै संगे।
अनदिनु नामु धिआवहि रंगे।
आवत सो जनु नामहि राता।
जा कउ दइआ मइआ विधाता।
एकहि आवन फिरि जोनि न आइआ।
नानक हरि कै दरसि समाइआ।। *अंग - 252*

वह पुरुष धन्य हैं जो आकर प्रभु का नाम जपते हैं जिसके बारे में फरमान है -

आतम रसु जिह जानही सो है खालस दैव॥
प्रभ महि, मो महि, तास महि रंचक नाहन भेव॥
सरब लोह ग्रंथ में से

अतः जिनका प्रभु से मिलाप हो गया, संसार में आना उनका ही सफल माना जाता है क्योंकि वाहिगुरु के बिना एक क्षण भर भी जीना पूरी तरह व्यर्थ है। जैसा कि फरमान है -

जिउ मछुली बिनु पाणीअै किउ जीवणु पावै॥
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै॥
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै॥
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥
अंग - 709

जिस वाहिगुरु के साथ तू मिलाप करना चाहता है, ऐ जीव! निश्चयपूर्वक तू हृदय में यह बसा ले कि कोई जगह

ऐसी नहीं जहाँ वह सूक्ष्म स्वरूप में न रमा हुआ हो। तेरे अन्दर-बाहर, धरती, पहाड़ों, पवन, पानी में भी है, कोई जगह ऐसी नहीं जहाँ वह नहीं है। उसे हृदय में बसा कर उसकी हाजिरी में नाम जप। जब तू इस प्रकार करेगा, तेरे ऊपर उस प्रभु की दया हो जायेगी। तेरे दुखों का खातमा हो जायेगा और उसके साथ मिलाप हो जायेगा।

सो अंतरि सो बाहरि अनंत॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत॥
धरनि माहि आकास पइआल॥
सरब लोक पूरन प्रतिपाल॥
बनि तिनि परबति है पारब्रहमु॥
जैसी आगिआ तैसा करमु॥
पउण पाणी बैसंतर माहि॥
चारि कुंट दह दिसे समाहि॥
तिस ते भिंन नही को ठाउ॥
गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ॥ *अंग - 294*

वह उपहारों का खजाना है, वह अपने रचित संसार को प्यार करता है तथा प्यार का रूप धारण करके ही संसार में रमा हुआ है -

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग।
जापु साहिब

फिर तू ही बता, जो उसे प्यार नहीं करता उस जैसा दोषी कौन है? वह सभी को खाने पीने को देता है, तुझे पीने के लिये निर्मल जल देता है, सांस लेने के लिये शुद्ध वायु, मन लगाने के लिये बच्चे, बुढ़ापे में सेवा करने के लिये सम्बन्धी दिये हैं, तुझे शक्ति दी है, ज्ञान दिया है, तेरे पालन पोषण के लिये अन्न दिया है और अनेक प्रकार की वस्तुएं पैदा की हैं, फिर बता तू उसे क्यों भूला रहता है? प्यारे! याद रख उसे भूलकर जो सांस लेता है हर श्वास तुझे दुखों की ओर धकेल रहा है क्योंकि फरमान है -

दुखु तदे जा विसरि जावै।
भुख विआपै वहु विधि धावै। *अंग - 98*

तृष्णा की भूख लग जाती है और अपनी वासनाओं की पूर्ति के लिए संसार में भ्रमण करता है। परमेश्वर को भूल जाता है। यदि यही नाम जपे -

सिमरत नामु सदा सुहेला
जिसु देवै दीन दइआला जीउ।। *अंग - 98*

अतः प्यारे! तुझे युक्ति बताते हैं कि तू नित्य अरदास किया कर कि मुझे अपने प्यारों की चरण धूलि दे, तेरा दर्शन करके मेरा मन भर जाता है।

खाक संतन की देहु पिआरे।
आइ पइआ हरि तेरै दुआरै।
दरसनु पेखत मनु आघावै
नानक मिलणु सुभाई जीओ।। *अंग - 98*

जिन्होंने वाहिगुरु जी को पति माना है उसने नाम का रस भोगा है, बड़े भाग्यशाली है। उस समय जीव तरले करता है कि मेरे अन्दर दर्शनों की लालसा जाग गई है और मेरा मन दर्शनों की प्यास के लिये तड़प रहा है, विरह की पीड़ा मैं सहन नहीं कर सकता क्योंकि वह एक प्रबल शक्ति है-

कबीर विरहु भुयंगमु मन बसै मंतु न मानै कोइ।
राम बिओगी ना जीऐ जीऐ त वउरा होइ।। अंग - 1368

हे सतगुरु! मेरे मन की प्यास है, वह तेरे दर्शनों की तृष्णा है, जो भी मुझे मेरे प्रभु के साथ मिला दे मैं उसके चरणों में गिर कर अपना अस्तित्व बेच दूँगा क्योंकि मेरे मन में दर्शनों के लिए अथाह प्यार जाग पड़ा है, प्रभु के मिलाप की प्रीति ने मेरे मन को घेर लिया है। मैं उसके आगे अपना तन भी, धन भी रख दूँगा और मन की मति भी देकर उससे प्रभु की कथा श्रवण करूँ और दिन रात वैरागी होकर उसकी सेवा में फिरता रहूँ।

प्रभ मिलबे कउ प्रीति मनि लागी।।
पाइ लगउ मोहि करु बेनती
कोऊ संतु मिलै बडभागी।।
मनु अरपउ धनु राखउ आगै
मन की मति मोहि सगल तिआगी।।
जो प्रभ की हरि कथा सुनावै
अनदिनु फिरउ तिसु पिछै विरागी।। *अंग - 204*

मेरा मन दर्शनों के लिए तरसता है, मैं उसके चरणों के साथ लिपट जाऊं जो मुझे मेरा प्रभु मिला दे, अपने पास कुछ भी न रखूं, सब कुछ अर्पण कर दूँ।

हरि दरसन कउ मनु लोचदा नानक पिआस मना।
अंग - 133

अतः यह एक हूक है जो इस भटकते जीव के मन में पैदा हो गई, उसकी जिज्ञासा प्रभु ने सुन ली तथा उसे प्रभु के मिलने का भेद बता दिया।

अतः ऐ प्यारे! जीव भटकता फिर रहा है, गुरु महाराज जी ने इस महान पवित्र बाणी द्वारा हमें प्रभु के साथ मिलने

के युक्ति बता दी है कि उन प्यारों को जाकर मिल, उनके साथ मिलकर सत्संग कर जिनमें शक्ति है कि वे तुझे भी उसके साथ मिला दें। उन प्यारों के मिलाप के बिना कोई भी उस परम शक्ति को तुझे मिला नहीं सकता क्योंकि तुझे रास्ते का कोई भी ज्ञान नहीं है। उन प्यारों की ड्यूटी प्रभु ने लगाई हुई है, उन पर शंका मत कर, दिन बीतते जा रहे हैं, सप्ताह बीत गए हैं, समय है, तू अब अपने आपको सम्भाल -

उमर ओहा विच लेखे दे
जो याद सांई विच गुजरे,
पैंदी मुजरे।
नही तां सानूं हासल की है
इस विच नीले हुजरे, संझ ते फजरे। *भाई वीर सिंह*

अतः इसलिये तू अपना कार्य कर, समय को सम्भाल।

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।।
छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी।।
हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना।।
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना।।
अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै।।
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै।।
अंग - 726

अतः इसलिये गुरु महाराज जी के उपदेशों को हृदय में बसाओ क्योंकि हमारा मानस जन्म जिसकी कामना, देव लोक के देवता भी कर रहे हैं, हमें प्राप्त हुआ है -

भई परापति मानुख देहुरीआ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै॥
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥ *अंग - 12*

(पृष्ठ 6 का शेष)

चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥
अंग - 133

फरीदा काली धउली साहिबु सदा है जे को चिति करे॥
आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ ॥
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥
अंग - 1378

अतः आओ! हम सब अरदास में जुड़ें -

सा मति देहु दइआल प्रभ जितु तुमहि अराधा ॥
नानकु मंगै दानु प्रभ रेन पग साधा ॥ ***अंग - 678***

अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे ॥
नानकु दासु इही सुखु मागै
मो कउ करि संतन की धूरे॥ ***अंग - 205***

लेखै कतहि न छूटीऐ खिनु खिनु भूलनहार ॥
बखसनहार बखसि लै नानक पारि उतार ॥
अंग - 161

कि महाराज जी हमें भी यह पावन दृष्टि प्रदान कर रहे हैं -

जिना दिसंदड़िआ दुरमति वंजै मित्र असाडड़े सेई ॥
हउ ढूढेदी जगु सबाइआ जन नानक विरले केई ॥
अंग - 520

आशा तथा दृढ़ विश्वास के साथ की गई अरदास को सतगुरू जी अवश्य ही फल लगाते हैं -

बिरथी कदे न होवई जन की अरदासि ॥
नानक जोरु गोविंद का पूरन गुणतासि ॥
अंग - 819

हमारी यह अरदास है कि सतगुरू जी की कृपा की बदौलत समस्त पाठकगणों के जीवन के अन्दर वह उल्लास, बसन्त, खुशहाली, खुशबू तथा नाम-वाणी की कोपलें फूटें ताकि सबको ऊँची व सुच्ची दृष्टि प्राप्त हो जाए। ताकि -

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥
अंग - 677

के सिद्धान्त की पूर्णता की तरफ हम लोग बढ़ सकें।

सदा बसंतु गुर सबदु वीचारे ॥
राम नामु राखै उर धारे ॥ 3 ॥
मनि बसंतु तनु मनु हरिआ होइ ॥
नानक इहु तनु बिरखु राम नामु फलु पाए सोइ ॥
अंग - 1176

सतगुरू जी सबके ऊपर कृपा करें ताकि सभी के जीवन नाम-वाणी रूपी बसन्ती रंग में रंगे जाएँ।

बिनु सबदै अंतरि आनेरा

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 32)

हमें यह सन्देह पड़ जाता है कि हम गुरू कहाँ से ढूंढें? लेकिन हमें इस बात पर तनिक सा भी शक नहीं होना चाहिए क्योंकि चाभी तो हमें पाँच प्यारे पकड़ा ही देते हैं, जिस समय कि वे हमें अमृतपान करवाते हैं। यह बात अलग है कि हम उस चाभी का इस्तेमाल ही नहीं करते हैं। महाराज जी कहते हैं कि तुम साधना सम्पन्न पुरुषों के पास जाओ जो कि इन सब बातों के बीच से गुजरते हुए मंजिले मकसूद पर पहुँच चुके हैं। वे कभी भी किसी को अपने पीछे नहीं लगाया करते हैं। पीछे तो वे तभी लगाएंगे जबकि उनका अपना निजी अस्तित्व कायम होगा। जब वे स्वयं तो गुरू या परमात्मा में अभेद हो ही चुके हैं तो फिर वे अपने पीछे कैसे लगा लेंगे? पुस्तकों में लिखते रहते हैं कि सन्त अपने पीछे लगाते हैं लेकिन साधु संगत जी! जो सन्त अपने पीछे लगाता है वह तो सन्त ही नहीं है। सन्त तो कहते ही उसे हैं जो कि कुछ भी नहीं होता है। जो अभी 'कुछ है' वह तो जीव ही है, वह सन्त नहीं है। क्योंकि यदि 'मैं' है तो परमात्मा तो है ही नहीं -

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही ॥
अनल अगम जैसे लहरि मइ ओदधि
जल केवल जल माँही ॥ ***अंग - 657***

जब 'मैं' अन्दर से निकल गई तो उसे चाहे सन्त कहते जाओ, चाहे ब्रह्मज्ञानी कहते जाओ, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। अत: जब वह कुछ है ही नहीं तो वह पीछे किसके लगाएगा? इस प्रकार से सारी बातें निरर्थक व निर्मूल हुआ करती हैं और ये सब अज्ञानियों की बातें होती हैं। महापुरुष बताते हैं कि जब तक हमारे अन्दर शब्द का प्रकाश नहीं होता है, तब तक हमें आत्म वस्तु की प्राप्ति हो ही नहीं पाएगी। वह धुन प्रत्येक समय विद्यमान है। वह ऊर्जा, जो कि दिव्य ऊर्जा है, उसने सारी कायनात को धारण किया हुआ है। वह कायनात कितनी बड़ी है, हम इसकी तो गणना कर ही नहीं सकते हैं, इसलिए इस विषय को तो छोड़ ही देना चाहिए। यदि हम इस बात को छोड़ दें कि कितने खण्ड हैं, कितने ब्रह्मांड हैं तो हमें समझना काफी सरल हो जाता है। दरअस्ल इनके बारे में तो हम सोच ही नहीं सकते हैं। महाराज जी कहते हैं कि जितना तुम इनके बारे में सोच सकते हो, उसके आगे प्रकृति और भी है क्योंकि बेअन्त या असीम के बारे में, तुम कहाँ तक सोच सकते हो? तुम्हारी बुद्धि तो उस बेअन्तता या अनन्तता को सोचने वाली है ही नहीं। तुम तो बस इतना ही समझ लो कि वह असीम है। यथा -

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात ॥
अंग - 5

यह सारी रचना किसके सहारे से खड़ी है? महाराज जी कहते हैं कि यह सारी रचना, उस नाम शक्ति, जो कि मूल ऊर्जा १ओअंकार की है और जिसे शब्द धुन कहते हैं, के सहारे खड़ी है -

एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ।
भाई गुरदास जी, वार 26/2

अब नाम तो रखने ही है और अपनी बोली में ही रखने है, उस चीज को हम जानते भी नहीं हैं और दिखा भी नहीं सकते हैं, इसलिए हमने उसका नाम ओअंकार रख दिया है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी ने, श्री गुरू नानक साहिब जी ने एकदम ब्रैकट कर दिया कि इसे दो मत कहना बल्कि एक ही है। एकंकार भी शक्ति ओअंकार है। उसने -

नाम के धारे सगले जंत ॥
नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ ***अंग - 284***

उस नाम शक्ति ने सारी रचना को धारण किया हुआ है। वह नाम शक्ति प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर, शब्द रूप में हाजिर है।

यह बहुत ही जबरदस्त प्रश्न है कि फिर यह हमें सुनती क्यों नहीं है?

वह इसलिए सुनती नहीं है कि जिस प्रकार से कोई मीठा-मीठा राग चल रहा हो और व्यक्ति गाढ़ी नींद में सोया

हुआ हो। दूसरी तरफ जो जागता है उसे तो सुनता है। महाराज जी कहते हैं कि यह जो सात अरब दुनिया है, इसमें से कोई विरला मनुष्य है जो कि जागृत अवस्था में है, शेष सारा संसार तो अज्ञानता की नींद के अन्दर सोया पड़ा है -

धारना - सौं गिआ जग सारा जी,
माइआ दी नींद गाढ़ी।

एक नींद तो वह है जिसमें हमारा शरीर व दिमाग थकने के बाद उसे ताजा करने के लिए हम लोग एकान्त जगह पर लेट जाते हैं, साथ ही अपने समीपवर्ती लोगों को हम हिदायत करते हैं कि हमें जगाना नहीं क्योंकि मुझे नींद आ रही है।

दूसरी तरफ एक नींद वह भी होती है जिसमें पढ़ता लिखता, नौकरी-चाकरी करता, बड़े-बड़े भाषण देता हुआ, बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखता हुआ, बड़े-बड़े सिद्धान्त लोगों को देता हुआ भी सोया पड़ा है। इसका कारण यह है कि उसे असली चीज का ज्ञान न होते हुए भी वह माया के प्रभाव के नीचे आ गया है। महाराज जी कहते हैं कि -

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता
सुतिआ रैणि विहाणी ॥ अंग - 920

रजो, सतो तथा तमो ये तीन गुण माया के हैं और इन्हीं के कारण सारा संसार सोया पड़ा है। कोई विरला गुरुमुख, है जो कि जागता रहता है, दूसरी बात यह है कि गुरुमुख शरीर नहीं हुआ करता है। अतः धुन तो चल रही है लेकिन व्यक्ति के सोए होने के कारण उसे सुनाई नहीं पड़ती है। जो गुरुमुख जन होते हैं वे हमेशा जागृत अवस्था में रहते हैं-

गुरमुखि जागि रहे दिन राती ॥ अंग - 1024

अब तो अपने यहाँ प्रबन्ध हो गया है कि तुम अपने टाइमपीस पर अलार्म को सेट कर दो निश्चित समय पर धुन बजने लगेगी फलस्वरूप व्यक्ति जाग जाता है। जिस समय वह गाढ़ी नींद में होता है, उस समय उसे सुनाई नहीं पड़ती है। महाराज जी कहते हैं कि इसमें दो चीजों की जरूरत होती है। एक तो है - गुरू की कृपा।

गुर किरपा ते से जन जागे
जिना हरि मनि वसिआ बोलहि अंम्रित बाणी ॥
कहै नानकु सो ततु पाए जिस नो अनदिनु हरि
लिव लागै जागत रैणि विहाणी ॥ अंग - 920

गुरू जी की कृपा के कारण जब परमात्मा का नाम अन्दर बस जाता है तो फिर उसे जाग आ जाया करती है अन्यथा व्यक्ति को जाग आती ही नहीं है। अतः वास्तविकता यह है कि व्यक्ति तो सोया हुआ है लेकिन वह कह रहा है कि मुझे धुन तो सुनाई नहीं पड़ती है। गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीजन! इसमें तुमहारा ही दोष है क्योंकि तुम सोए पड़े हो। सच्चाई को तुम कैसे झूठला सकते हो? गुरू जी कहते हैं कि हवा भी गा रही है, आग भी गा रही है, धरती भी गा रही है। सो दरु की पउड़ी में से इस प्रकार से पढ़ लो -

होर केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे ॥

आप कहते हैं कि केवल इतने ही नहीं गाते हैं बल्कि और भी असंख्य गा रहे हैं, जिन्हें कि मैं इस समय लिख नहीं रहा हूँ। इसका तात्पर्य यह हुआ कि सारा संसार ही गा रहा है। सारे संसार के अन्दर नाम की धुन चल रही है। सवाल उत्पन्न होता है कि फिर हमें पता क्यों नहीं चलता है? मैं दिव्य श्रवणों की बात कर रहा था कि तुम्हारे कानों के बाहर इतनी अधिक मैल जम गई है कि अब तुम्हें ढोलक बजता हुआ भी सुनाई नहीं पड़ता है क्योंकि यह मैल पराकाष्ठा तक पहुँच गई है -

माइआधारी अति अंना बोला ॥
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥ अंग - 313

वह आन्तरिक शब्द को सुन ही नहीं रहा है। गुरू जी कहते हैं कि क्या तुम जाग रहे हो? कहता है कि हाँ महाराज जी मैं तो जाग रहा हूँ। गुरू जी कहते हैं कि यदि जाग रहे हो तो तुम्हें फिर सुनता क्यों नहीं है? अतः फर्क इसी बात का है - 'बिनु सबदै अंतरि आनेरा।।' यदि तुम्हें शब्द सुनाई नहीं पड़ता है तो फिर तुम्हारे अन्दर अन्धकार है और तुम अज्ञानता व अन्धकार के, यानि कि माया के, प्रभाव के नीचे हो।

न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ अंग - 124

अन्धकार में कौन सी चीज ढूँढ़ी जा सकती है? जो चीज खो गई है उसे किस प्रकार से ढूंढ़ा जा सकता है? यदि वहाँ पर प्रकाश आ जाए तो उसी समय पता चल जाता है। गुरू जी कहते हैं कि तत्व वस्तु तो तुम्हारे अन्दर पड़ी हुई है लेकिन तुम्हारी बुद्धि के जो यन्त्र हैं उन्हें नियन्त्रित करने वाला जो जीवात्मा है, वह भूल चुका है, अब वह चीज मिलती ही नहीं है। आप इस प्रकार से फुरमान करते हैं -

नउ घर देखि जु कामनि भूली
बसतु अनूप न पाई ॥ अंग - 339

जो इसके अन्दर सुरति थी, वह केवल नौ घरों को देख-

देख कर ही भूल गई है। दोनों नासिकाएँ, दोनों कान, दोनों आँखें, जिह्वा तथा दो मल व मूत्र की इन्द्रियाँ अर्थात जो ये नौ दरवाजे थे, इन्हीं में निकल-निकल कर यह भूल गई है। यहीं बस नहीं है अपितु यह इतना अधिक झुंझलाहट में आ गई है कि यह आगे से आगे ही इच्छा करती जाती है। यथा-

धारना - बहु रंग तमाशे अ्खीआँ वेख ना र्जीआँ।

अखी वेखि न रजीआ बहु रंग तमासे।
उसतति निंदा कंनि सुणि रोवणि ते हासे।
सादी जीभ न रजीआ करि भोग बिलासे।
नक न रजा वासु लै दुरगंध सुवासे।
रजि न कोई जीविआ कूड़े भरवासे।
पीर मुरीदाँ पिरहड़ी सची रहरासे॥

भाई गुरदास जी, वार 27/9

गुरू जी कहते हैं कि जिन्हें हम ज्ञानेन्द्रियाँ कहते हैं वास्तव में ये अज्ञानेन्द्रियाँ ही हैं क्योंकि ये वास्तविकता से कोसों दूर ही रहती हैं। ये संसार को तो पकड़ती हैं लेकिन जो परमात्मा इनके अन्दर ही रहता है, उनसे ये अनभिज्ञ ही रहती हैं। कान जो है ये हँसने व रोने को सुन सुन कर ही तृप्त नहीं हो पाते हैं, जिह्वा स्वाद ले लेकर तृप्त नहीं होती है। नासिका सुगन्ध ले-लेकर तृप्त नहीं होती है। इस प्रकार से रसों-कसों के स्वाद में पड़ा हुआ यह व्यक्ति तृप्त हो ही नहीं पाता है, फलस्वरूप सुरति रूपी कामिनी पूर्णतः भूल चुकी है। श्री गुरू नानक देव महाराज जी हमें एक शब्द के माध्यम से चेतावनी देते हैं कि -

धारना - किते भुल ना जाईं एइे मनाँ मेरिआ,
मोतीआँ दे मंदर वेख के।

मोती त मंदर उसरहि रतनी त होहि जड़ाउ ॥ कसतूरि
कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥

अंग - 14

यदि तुम सोने के महलों को, जो मोतियों के द्वारा सुसज्जित है, देखकर भ्रमित हो गए, चन्दन की सी सुगन्ध देती हुई कोठियों को देखकर भ्रमित हो गए तो फिर तुम्हारे रूहानियत के मार्ग में यही चीजें बाधाएँ बन जाएंगी। सुन्दर व मनमोहक स्त्रियों को देखकर यदि तुम भटक गए -

धरती त हीरे लाल जड़ती पलधि लाल जड़ाउ ॥
मोहणी मुखि मणी सोहै करे रंगि पसाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥

अंग - 14

किसी बहुत बड़ी चीज की तरफ इशारा हो रहा है। रिद्धियों सिद्धियों को देखकर व्यक्ति प्रायः मोहित हो जाता है कि काश ये उसे प्राप्त हो जाएँ। यदि उसे ये प्राप्त हो जाएँ तो वह इन्हें छिपाकर नहीं रख पाता है फलस्वरूप फिर उसे लूटने वाले लुटेरे भी आ जाते हैं और वे उसे अच्छी तरह से लूट लेते हैं। जब उसके पास से वह रिद्धियों सिद्धियों वाली शक्ति समाप्त हो जाती है तो फिर उसके पास केवल पाश्चाताप ही शेष रह जाता है -

सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ ॥
गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥

अंग - 14

राजनैतिक शक्ति के नशे में व्यक्ति अहंकारी हो जाता है, फिर उसे जायज और नाजायज में अन्तर करना भी मुश्किल हो जाता है। गुरू जी कहते हैं कि -

सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ ॥
हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥

अंग - 14

आप इशारा किस तरफ करते हैं? आप कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! तुम वास्तविक चीज की तरफ तो ध्यान ही नहीं देते हो। यह तो तुम भूल ही गए हो कि तुम्हारे अन्दर परमात्मा है। तुम्हारा ध्यान परमात्मा की तरफ से भटक कर जब सांसारिक पदार्थों की तरफ ही हो गया है तो फिर तुम्हारा अमृत रस से भरा हुआ कमल उल्टा हो जाता है। यही कारण है कि जब तुम्हारा अमृत से भरा हुआ कमल रूपी हृदय उल्टा हो गया है तो फिर कोई भी सांसारिक प्राप्ति, चाहे वह राजनैतिक शक्ति है, चाहे धन पदार्थों की भरमार है, चाहे भोगों की बहुतायत है, चाहे रिद्धियां सिद्धियाँ हैं, तुम्हें खुश नहीं कर पाती हैं क्योंकि तुम जीवन की धारा से टूट चुके हो। गुरू जी का ऐसा फुरमान है -

धारना - जल बल जावे जीउड़ा नाम तों बिनाँ।

हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ ॥
मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ ॥

अंग - 14

अतः इस प्रकार से यह जो हमारी सुरति है, यह नौ घरों में (नौ ज्ञानेन्द्रियों में) घूम घूम कर भूल चुकी है। गुरू जी कहते हैं कि तुम तो बिल्कुल ही जल चुके हो। जो तुम्हारा

हृदय रूपी कमल था, उसमें से अमृत रस पूर्णतः गिर चुका है क्योंकि वह तो बिल्कुल ही उल्टा हो गया है। इसलिए अब चाहे कोई भी प्रयत्न कर लो, चाहे तुम बादशाह ही क्यों न बन जाओ, तुम्हें उस दिव्यानन्द की प्राप्ति नहीं हो सकेगी, अब बादशाह को तो सारा ही संसार जानता होता है -

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ॥
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ ॥
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ॥
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ॥
कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे ॥ अंग - 2

इस प्रकार ये सांसारिक प्राप्ति क्या मायने रखती है, यह तो केवल सपनों का ही संसार है। अतः साधु संगत जी! वास्तविकता को समझने का यत्न करो। वास्तविकता तो यह है कि यह जीव अपने अन्दर निवास कर रहे परमात्मा को भूल कर दुखमय जीवन व्यतीत कर रहा है। गुरू जी कहते हैं कि भद्रपुरुष! तुम्हारे अन्दर नाम की धुन है -

दिला का मालकु करे हाकु ॥

अंग - 897

वह आवाज दे रहा है कि इधर आ जाओ! इधर आ जाओ! यह आवाज सुन लो! इसे पकड़ लो! सवाल उत्पन्न होता है कि क्या इसे पकड़ने की कोई विधि है? महापुरुषों को पता होता है कि आवाज को कैसे पकड़ा जाता है। बस तुम मेहनत करते जाओ, तुम्हें आवाज पकड़ने के बारे में भी पता चल जाएगा और सफर भी तय होने लग पड़ेगा। यह तो अनुभवी ज्ञान है केवल सिद्धान्त नहीं है। अब समस्या यह है कि हमारी सुरति तो नौ घरों के अन्दर ही विस्मृत हो चुकी है, उन्होंने ही इसे मोहित कर लिया है। यह जो टैलीविजन है, इसके चैनलों के बारे में पता ही नहीं है कि इसके कितने चैनल हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार बच्चे अपना जितना समय स्कूल में बिताते हैं, इससे डेढ़ गुणा टैलीविजन देखकर व्यतीत करते हैं। अब इसका प्रभाव क्या होगा? इसने प्रभाव यह डालना है कि हमारा मन फैलाव में चला जाएगा। उनके उन्दर कोई निर्णय लेने की क्षमता ही नहीं रह जाती है। दिमाग ज्यादातर असमंजस की स्थिति में रहने लगेगा। आजकल आप जब लगभग पन्द्रह वर्ष के बच्चे को देखोगे तो वे आधे पागल से प्रतीत होंगे। इसका कारण यह है कि उनके ऊपर देखने और सुनने का नकारात्मक प्रभाव पड़ता जा रहा है। गुरू जी कहते हैं कि प्रेमीपुरुष! यदि तुमने कुछ सुनना ही है तो नाम की धुन को सुनो। नाम की धुन के साथ जितना अधिक मन जुड़ता जाएगा उसी अनुपात में गुप्त बातें तुम्हारे सामने आने लग पड़ेंगी। तुम बैठे ही देख लोगे कि यहाँ पर क्या हो रहा है।

बापू जी (श्रीमती रणजीत कौर जी के पिता जी) लाहौर में थे। बीबी जी (श्रीमती रणजीत कौर जी) अभी बाल्यावस्था में थीं। बापू जी, भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी का अत्याधिक सम्मान किया करते थे। उन्होंने इन्हें बुलाया और कहने लगे, बेटा जी! एक सिंह आ रहा है, तुमने उसके लिए दरवाजा नहीं खोलना है। लाहौर के स्टेशन पर गाड़ी रुकी और एक घंटा बीतने पर वह सिंह आ गया। इन्होंने अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया। उस समय चौबारे पर (पहली मंजिल पर) रहा करते थे। जिस समय वह आया और उसने दरवाजा खटखटाया तो इन्होंने कहा कि पिता जी ने दरवाजा न खोलने के लिए कहा है।

वह कहने लगा, मेरे लिए तो नहीं कहा होगा, मैं तो मुम्बई (उस समय बम्बई ना था) से आया हूँ। इन्होंने कहा कि पिता जी ने कहा था कि एक सिंह आ रहा है और मैं उसके लिए दरवाजा न खोलूँ। वह बोला, सिंह तो मैं ठीक हूँ लेकिन मैं तो बहुत दूर से आ रहा हूँ। मेरे बारे में तो उन्हें पता ही नहीं है, उन्होंने किसी अन्य सिंह के लिए कहा होगा। इन्होंने दरवाजा खोल दिया। जब पिता जी के पास उसने नमस्कार की तो वे नाराज हो गए। देखने में तो वह सिंह, पूर्ण गुरसिक्ख प्रतीत हो रहा था और भजन बन्दगी करने वाला प्रतीत हो रहा था।

बापू जी बोले, क्यों भद्रपुरुष! तुमने बम्बई में गुरू दशमेश जी की दस्तार को दाग लगा दिया। तुम क्या करते रहे, वहाँ पर? इतने बुरे कार्य? इतना कहने की देर थी कि वह ऊँची आवाज में रोने लग पड़ा और गर्दन झुका कर खड़ा हो गया, उसके बाद चरणों पर गिर पड़ा कि जोर-जोर से हुबक-हुबक कर रोने लग पड़ा तथा विनतियाँ करने लगा कि महाराज जी! इस बार बख्श दो। मैं तो भूल गया था कि मुझे यहाँ पर देखने वाला कोई नहीं है।

उन्होंने कहा, प्रेमीपुरुष! जब मेरे जैसा साधारण मनुष्य भी तुम्हें देख सकता है तो फिर क्या तुम्हें गुरू नहीं देख रहा है? मुझे यहाँ पर बैठे हुए को 2000 कि.मी. की दूरी पर की सारी घटना दिखाई पड़ रही है और तुम्हें यह लग रहा है कि तुम्हें कोई देख ही नहीं रहा है? हम लोगों के जन्म से आठ वर्ष पहले ही हम लोगों का रिश्ता पक्का कर दिया और

रुपया पकड़ा कर मंगनी कर गए। इनकी बहन वहाँ पर पड़ोस में ही ब्याही हुई थी, उसे वे एक रूपया पकड़ा कर कह आए थे कि इस घर में एक लड़के ने आना है और हमारे घर एक लड़की ने आना है। इनका वैवाहिक रिश्ता दरगाह से ही लिखा हुआ है। उसने, इस परिवार की सेवा करने के लिए आना है। मेरे बड़े भाई का जन्म हुआ लेकिन उन्होंने कोई ध्यान ही नहीं दिया। उनके घर में भी एक लड़की का जन्म हुआ उसका भी उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। जब लाहौर में बैठे हुओं ने उन्होंने सुना कि उनके घर एक लड़के का जन्म हुआ है तो उस समय उन्होंने अपने चाचा जी की लड़की यानि कि अपनी बहन को कहा कि तुम वह रुपया पकड़ा आओ। अभी मेरी आयु अढ़ाई वर्ष की ही थी कि मेरी मंगनी कर दी गई। भाई रणधीर सिंह जी ने इनकी (श्रीमती रणजीत कौर जी) बड़ी बहन का रिश्ता बलबीर सिंह के लिए मांगा। बापू जी कहने लगे, भाई साहिब! इसकी किस्मत में विधवा होना लिखा है। यह शादी के कुछेक वर्षों बाद ही विधवा हो जाएगी।

गृहस्थाश्रम में रहने वाला व्यक्ति कामकाज करने वाला व्यक्ति (आप लौहार में नौकरी करते थे) लेकिन बन्दगी के द्वारा जब आन्तरिक प्रकाश हुआ, अनुभव जागृत हुआ तो उन्होने भूत, भविष्य व वर्तमान तीनों ही देख लिए। साधु संगत जी! ये सारी प्रयोगात्मक बातें हैं, वैज्ञानिक बातें हैं।

अब प्रश्न यह उत्पन्न है कि व्यक्ति की सुरति परमात्मा के साथ जुड़ती क्यों नहीं है? इसका कारण यही है कि इसकी सुरति नौ घरों में ही भूली रहती है। दूसरी बात यह है कि हम सोए रहते हैं -

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता
सुतिआ रैणि विहाणी ॥ ***अंग - 920***

अब सोए हुए व्यक्ति को आन्तरिक आवाज कैसे सुनाई पड़ जाएगी? गुरू जी कहते हैं कि यह व्यक्ति तो इतनी गाढ़ी नींद में सो गया है कि अब यह जगाने पर भी जागता नहीं है। गुरू जी इसे आवाजें लगाकर जगाते हैं। इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - तैनूं गुरु जगाउंदे ने, मनाँ तूं जाग लै।

जाग लेहु रे मना जाग लेहु कहा गाफल सोइआ ॥
जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संगि न होइआ ॥
अंग - 726

इतना गाफिल होकर सो गया है। जिनके मोह व प्यार में तुम खोए पड़े हो, चाहे वह माँ है, चाहे बाप है, चाहे बहन-भाई है, चाहे पुत्र है, इनमें से किसी ने भी तुम्हारे साथ में नहीं जाना है। जब जाना है, तो तुमने अकेले ही जाना। तुम तो यहीं पर अपना सारा विस्तार करके बैठ गए हो। वहाँ यदि तुम्हारी किसी ने सहायता करनी है तो वह 'नाम' ने सहायता करनी है लेकिन उस तरफ तो तुम्हारा जरा सा भी ध्यान ही नहीं है। तुमने तो संसार में आकर उन चीजों के साथ सम्बन्ध जोड़ लिया है जिन्होंने जीते-जीते ही तुम्हारा साथ छोड़ जाना है। सबने यहाँ से धीरे-धीरे चले जाना है -

फरीदा किथै तैडे मापिआ जिनी तू जणिओह ॥
तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि ॥
अंग - 1381

तुम तो अपने शरीर का ही अहंकार करते जा रहे हो। एक दिन ऐसा भी आना है, जब तुम्हारे शरीर के संगियों ने भी तुम्हारे शरीर का साथ छोड़ जाना है -

धारना - तैनूं छड गइे बाल सखाई,
जिंदे तैनूं छड गए।

चबण चलण रतंन से सुणीअर बहि गए ॥
हेड़े मुती धाह से जानी चलि गए ॥ ***अंग - 1381***

कोई समय था जब तुम अपने दाँतों के साथ रस्सी को पकड़ कर हवाई जहाज को रोक देते थे। अखवार में खबर छपती थी कि एक व्यक्ति ने दाँतों के द्वारा हवाई जहाज को ही खींच लिया। एक खबर थी कि एक व्यक्ति ने दाँतों के द्वारा एक भरी हुई बोरी को उठा लिया। लेकिन समय के अन्तराल के साथ दाँतों ने जवाब दे दिया, दाँत टूट गए। अब नए बनावटी दाँत लगवाता है। मुँह में से शुद्ध शब्द नहीं निकलते हैं, आँखों की ज्योति घटती जाती है, चश्मों के नम्बर बदलते जाते हैं। जो नेत्र ज्योति जन्म के समय ही साथ में आई थी, वह भी समाप्त होती जा रही है। कानों से बहुत कम सुनाई देने लग पड़ा, मशीनें लगवाता हैं कि थोड़ा बहुत सुनाई देता रहे। अब किया क्या जाए? सुनना चाहता है लेकिन सुन नहीं पाता है, हाथ काम नहीं करते हैं, काँपते हैं और पैर चल नहीं पाते हैं -

फरीदा इनी निकी जंघीऐ थल डूंगर भविओम् ॥
अजु फरीदै कूजड़ा सै कोहाँ थीओम ॥ अंग - 1378

यह जो तीन फुट पर पानी पड़ा हुआ है, इसे मैं उठकर पी नहीं सकता हूँ। न जाने मेरी शक्ति कहाँ चली गई है? यदि मुझे दूसरा कोई व्यक्ति सहारा देता है, तभी मैं करवट

ले पाता हूँ। गुरू जी कहते हैं ऐ प्रेमीपुरुष! अभी भी तुम सो ही रहे हो? अभी भी तुम्हें जाग नहीं आई? यथा -

जाग लेहु रे मना जाग लेहु कहा गाफल सोइआ ॥
जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संगि न होइआ॥
मात पिता सुत बंध जन हितु जा सिउ कीना ॥
जीउ छूटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना ॥

अंग - 726

जिनके साथ तुमने इतना मोह-प्यार किया वे ही तुम्हें आग में जला देंगे। अतः यह व्यक्ति इतना अधिक भूल जाता है, इस संसार में आकर कि इसे जाग आ ही नहीं पाती है। गुरू जी कहते हैं कि तीनों गुणों के अन्दर साार संसार सोया पड़ा है और यह जगाने से भी जागता नहीं है। 'शब्द' तो इसके अन्दर चल रहा है लेकिन इसे सुनाई नहीं पड़ रहा है। गुरू जी कहते हैं -

माइआधारी अति अंना बोला ॥
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥ *अंग - 313*

हम लोग तो मायाधारी धन-दौलत वाले को कहते हैं, लेकिन वास्तविकता यह है जैसा कि गुरू जी फुरमान करते हैं कि परमात्मा के बिना, अन्य दृश्यमान जगत में जिसका मन रच गया है, उसे मायाधारी कहा जाता है। माया को धारण करने वाला मायाधारी और नाम को धारण करने वाला नामधारी कहलाता है। इसने नाम को तो धारण किया नहीं है बल्कि माया को ही धारण कर लिया है। हुआ क्या? इसके दिव्य नेत्र व दिव्य कान बन्द हो गए हैं - सबदु न सुणई बहु रोल घचोला।। यह स्वयं ही अन्धा व बहरा हो गया है। अब तो पराकाष्ठा तक का यह बहरा हो चुका है, सुनने वाली मशीन, चाहे कानों में लगा लो अथवा गर्दन में लगा लो, इसे कुछ भी सुन नहीं पा रहा है क्योंकि इसकी श्रवण शक्ति अब शून्य हो गई है। वह क्यों हुई? क्योंकि उसने माया धारण कर ली है। न तो अब इसे महापुरुषों का उपदेश सुनाई पड़ता है और न ही कोई अन्य बात सुनाई पड़ती है। अन्त में बाबा फरीद जी कहते हैं कि अब किया क्या जाए -

फरीदा कूकेदिआ चाँगेदिआ मती देदिआ नित ॥
जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित ॥

अंग - 1378

ऊँची आवाज में चारों वेद, छः शास्त्र, सत्ताइस स्मृतियां, उपनिषद, कुरान शरीफ, तौरेत, अंजील, जम्बूर, बाइबिल, श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी, असंख्य महात्मागण, इस जीव को उपदेश कर रहे हैं लेकिन किया क्या जाए। इसे जाग ही नहीं आ पा रही है। सभी इसे जगाने की कोशिश करते हैं लेकिन यह जागता नहीं है -

धारना - भाग जिहनाँ दे मंदे
दितीआँ बागाँ तों ना जागदे।

इसके अन्दर एक शक्ति है चाहे उसे मन कह लो, चाहे शैतान कह लो, चाहे मार देवता कह लो, वह इसे जागने ही नहीं देता है। महापुरुष कहते हैं कि यह अन्य रसों के अन्दर इतना अधिक मग्न हो गया है कि यह सारे उपदेशों को सुनने के बाद भी उधर ध्यान नहीं देता है। इसकी दशा एक लंगड़े गधे जैसी हो गई है जो कि दलदल में घुस गया है। वह जितना अधिक जोर लगाता है उतना ही दलदल में धँसता चला जाता है। अब यदि कोई भला पुरुष उस गधे को उठाकर ही बाहर रख दे फिर तो वह निकल सकता है अन्यथा उसका दलदल से बाहर निकल पाना नामुमकिन है। ठीक इसी प्रकार से यदि कोई पूर्ण महापुरुष इस जीव को बाहर निकाल दे फिर तो यह दलदल से बाहर निकल सकता है, अन्यथा जीव के अन्दर इतनी शक्ति नहीं हुआ करती है। गुरू जी कहते हैं, 'जो सैतानि वंझाइआ से कित फेरहि चित।।' इस प्रकार से इतने उपदेशों के बाद भी इसे याद नहीं आया करती है। गुरू जी कहते हैं कि यह तो बहुत गाढ़ी नींद में सो गया है, इसलिए यह जाग नहीं पा रहा है। सवाल उठता है कि फिर यह कब जागेगा? गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

गुर किरपा ते से जन जागे
जिना हरि मनि वसिआ बोलहि अंम्रित बाणी ॥
कहै नानकु सो ततु पाए
जिस नो अनदिनु हरि लिव लागै
जागत रैणि विहाणी ॥ *अंग - 920*

यदि उस जीव का ध्यान उस परम पिता परमात्मा के साथ जुड़ जाए तो फिर जो रात के अन्धकार रूपी अज्ञानता की नींद इसे सुलाती नहीं है। इस ध्यान जुड़ने की भी एक अवस्था हुआ करती है और इस अवस्था तक पहुँचने के लिए बहुत सख्त मेहनत करनी पड़ती है। यदि गुरू अपनी कृपा कर दे तभी इस ध्यान के मण्डल में यह जीव पहुँच पाता है। गुरू जी कहते हैं कि यदि यह जिज्ञासु ध्यान के मण्डल में न पहुँचा तो बाहरी दिखावे मात्र से कुछ भी होने वाला नहीं है। फिर तो भेष धारण करके लोग को भ्रमित करने का क्या लाभ है -

भेख दिखाइओ जगत कउ लोगन कउ बस कीन।
अंत काल काती कटिओ बास नरक मो लीन।

जो भेष धारण करके लोगों को भ्रमित करता है, वह मरणोपरान्त गुरू की दरगाह में नहीं अपितु नर्कों में जाता है। अतः जब तक हम आन्तरिक तौर पर जागते नहीं हैं, तब तक हमें वास्तविक समझ नहीं आ पाती है। जो यह जाग होती है, यह गुरू की कृपा के बिना अन्य किसी भी विधि से नहीं आ पाती है। गुरू जी फुरमान करते हैं कि -

बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥
न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ *अंग - 124*

अब यह जीव शब्द को तो सुनता नहीं है यानि कि शब्द के साथ इसका ध्यान नहीं जुड़ता है, फलस्वरूप इसके अन्दर घनघोर अन्धकार छाया हुआ है क्योंकि प्रकाश तो शब्द का ही होना है। गुरू जी कहते हैं कि आत्म वस्तु तो अन्दर लबालब भरी पड़ी है लेकिन शब्द के द्वारा जब तक द्वार खुलता नहीं है तब तक यह परमात्मा को भूला ही रहता है-

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है
मनमुखा सादु न पाइआ ॥
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै
भ्रमदा भरमि भुलाइआ ॥
अंम्रितु तजि बिखु संग्रहै करतै आपि खुआइआ ॥
अंग - 644

समझ न होने के कारण यह व्यक्ति भूला ही फिर रहा है और दिन रात भूला रहता है। गुरवाणी इसे आवाजें लगाती रहती है लेकिन इसे कुछ भी पता नहीं चल पाता है। इसका कारण यह है कि इसके अन्दर बहुत सारी चीजों की कमी है। इरादा नहीं बनता है, आगे बढ़ने के लिए साहस उत्पन्न नहीं होता है। इस प्रकार के बहुत सारे कारण होते हैं कि यह व्यक्ति आगे नहीं बढ़ता है, फलस्वरूप इसके अन्दर अन्धकार ही बना रहता है। जब अन्दर अन्धेरा है तब तक बात नहीं बन पाती है। गुरू जी ने एक जगह पर लिखा है कि यह तो हल्काया हुआ है -

बिनु सबदै सभु जगु बउराना
बिरथा जनमु गवाइआ ॥ *अंग - 644*

एक दो चार या दस नहीं वरन सारा संसार ही पागल हुआ पड़ा है। फौजों की जरूरत ही न पड़े यदि यह व्यक्ति हल्काया हुआ न हो, फिर पुलिस की भी जरूरत नहीं पड़ेगी। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि यह शब्द के साथ टूटा हुआ है। यदि यह पुनः शब्द के साथ जुड़ जाए तो अभी सत्युग शुरू हो जाएगा। फिर किसी भी अन्य प्रबन्ध की जरूरत नहीं रहेगी। लोग अपने-अपने हक पर रहें, अपना-अपना काम करें, सारी समस्या ही समाप्त हो जाएगी। गुरू जी कहते हैं कि ये तो सारे ही लोग पागल हुए पड़े हैं -

बिनु नावै जगु कमला फिरै गुरमुखि नदरी आइआ ॥
अंग - 644

नाम के बिना यह सारा संसार पागलपन में गरक हुआ पड़ा है। यह सच्चाई जब तक हमें समझ में नहीं आती है, तब तक बात नहीं बन पाएगी। गुरू के सिद्धान्त से हम लोग बहुत दूर हैं। इस प्रकार से गुरू जी फुरमान करते हैं कि प्रेमीजनो! गुरू तो जगा रहा है, लेकिन यह जीव गुरू से शब्द रूपी चाभी लेकर अपने अन्धकार को दूर करता ही नहीं है-

सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुलै नाही
गुरु पूरै भागि मिलावणिआ ॥ *अंग - 124*

पाँच प्यारों ने इसे वाहिगुरू मन्त्र रूपी चाभी तो पकड़ा दी है लेकिन अब यह उस चाभी का प्रयोग करके ताले को खोलता ही नहीं है -

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥
अंग - 205

जब तक सतगुरू की चरण-शरण में नहीं आता है, तब तक इसका कुछ भी बनने वाला नहीं है। अब हमें तो शरण का अर्थ भी समझ नहीं आता है। हम लोग तो कहेंगे कि शरण क्या हुई? हम लोग तो गुरू के पास आए हुए ही हैं। गुरू जी कहते हैं कि इस प्रकार से शरण में आना नहीं हुआ करता है। शरण में तो द्रौपदी आई थी। अन्तर्मन से उसने केवल एक आवाज दी थी -

अखी मीटि धिआनु धरि हाहा किशन करै बिललाँदी।
कपड़ कोटु उसारिओनु थकेदूत न पारि वसाँदी।
हथ मरोड़नि सिरु धुणनि पछोतानि करनि जहि जाँदी।
घरि आई ठाकुर मिले पैज रही बोले सरमाँदी।
नाथ अनाथाँ बाणि धुराँदी।
भाई गुरदास जी, वार 10/8

गुरू जी कहते हैं कि हाथी डूब रहा है और उसका अपना बल पूर्णतः समाप्त हो गया -

जब ही सरनि गही किरपा निधि गज गराह ते छूटा॥
महमा नाम कहा लउ बरनउ

राम कहत बंधन तिह तूटा ॥ *अंग - 632*

जब शरण में आ गया तो उसी समय भगवान ने तेन्दुए की पकड़ को हटा दिया। भगवान कोई निर्जीव चीज तो है नहीं। वह तो जीती-जागती हस्ती है -

पेखत सुनत सदा है संगे मै मूरख जानिआ दूरी रे ॥
अंग - 612

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई ॥
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई ॥ 1 ॥
ईत उत नही बीछुड़ै सो संगी गनीअै ॥
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीअै ॥
रहाउ ॥
प्रतिपालै अपिआउ देइ कछु उन न होई ॥
सासि सासि संमालता मेरा प्रभु सोई ॥ अंग - 677

वह तो हमसे तनिक सा भी नहीं बिछुड़ता है, यह बात अलग है कि हम तो हमेशा ही उससे बिछुड़े रहते हैं। अतः महाराज जी कहते हैं कि जब तक गुरू की कृपा हमारे ऊपर न हो, तब तक हमे इस बात का पता ही नहीं चल पाया करता है क्योंकि गुरू तो होता ही वह है -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

और उसकी निशानी क्या है -

पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥
अंग - 1291

वहाँ पर शब्दों की धुन बज रही है 'तह बाजै सबदु नीसाणु।।' यह निशानी है उस जगह की। वहाँ पर प्रत्येक समय आत्मिक संगीत बज रहा है वह भी बिना बजाए हुए, अपने आप ही बज रहा है।

मैं एक बार अमेरिका में एक टूरिस्ट प्लेस पर देखने चला गया उस जगह का नाम था **House on the rock**। वहाँ पर जाकर, एक डालर, वहाँ के निर्धारित स्थान पर डाल दो तो बीस मिनट तक अपने आप ही आरकैस्ट्रा बजता रहता है। इसी प्रकार से उसके आगे तबला तथा सितार आदि अलग अलग पड़े थे। जब हमने एक डालर डाल दिया तो सब कुछ इकट्ठा ही एक सुर व ताल में बजने लग पड़ा। ठीक इसी प्रकार से हमारे अन्दर आत्मिक संगीत बज रहा है लेकिन हमारी सुरति वहाँ तक पहुँचती ही नहीं है। गुरू महाराज जी कहते हैं कि यदि वहाँ तक हमारी सुरति पहुँच जाए 'पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबद नीसाणु।।' तो वहाँ पर इतनी अधिक मस्ती है कि व्यक्ति आश्चर्यचकित हो जाता है -

दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु ॥
अंग - 1291

वह तो विशुद्ध विसमाद का ही मण्डल है -

तार घोर बाजित्र तह साचि तखति सुलतानु ॥
अंग - 1291

परमात्मा के द्वार पर निरन्तर संगीत बज रहा है, बस अपनी सुरति को एकाग्र और सूक्ष्म करके सुनो -

सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ ॥
अंग - 1291

दसवें द्वार में सुरति को एकाग्र करके उस दिव्य संगीत को सुना जा सकता है और दसवें द्वार में जाने के दो मार्ग हैं। एक मार्ग तो वह है जिसे योगी लोग करते हैं, वे पहले पाँच चक्रों को बेधते हैं, छठा चक्र आज्ञाचक्र है। इसके बाद वे उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं। दूसरा मार्ग वह जो हमें गुरू महाराज जी ने बताया है, वह है सुरति को शब्द के साथ जोड़कर दसवें द्वार में प्रवेश किया जाता है, दरअस्ल कल्युग के अन्दर हमारी सेहत इतनी अधिक कमजोर हो चुकी है कि हम योगीजनों वाले कठिन अभ्यासों को करने के योग्य ही नहीं रह गए हैं। इसीलिए गुरू जी ने हमारे समक्ष सुरति-शब्द मार्ग को प्रस्तुत किया है -

सुरति सबदि भव सागरु तरीअै नानक नामु वखाणे॥
अंग - 938

सुरति को शब्द के साथ जोड़ देते हैं। शब्द हमें आज्ञाचक्र में से मिल जाता है। वह शब्द भी दसवें द्वार से ही आता है। उस शब्द को लेकर हम उस स्थान पर पहुँच जाते हैं। इस प्रकार गुरू जी ने हमें यह बहुत ही सरल मार्ग बतलाया है। अब यदि हम इस मार्ग को अपनाकर इस पर आगे नहीं बढ़ते हैं, तो फिर तो यह हमारा दुर्भाग्य ही है। अतः गुरू महाराज जी कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! तुम उस संगीत या राग को सुनो जो कि तुम्हारे अन्दर अपने आप ही बज रहा है -

अकथ कथा बीचारीअै मनसा मनहि समाइ ॥
अंग - 1291

जो मन है, यह मन के बीच ही समा जाएगा और अ-मन हो जाएगा, जिस समय कि तुम ज्ञान-मण्डल में जाकर

परमात्मा की कथा की विचार करोगे -

उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ
इहु मनु कतहु न जाइ ॥ *अंग - 1291*

जो कमल उल्टा हो गया था, वही सीधा हो गया, नाम की शक्ति के द्वारा -

हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ ॥ *अंग - 14*

अब वह जलता नहीं है क्योंकि अब वह सीधा हो गया है, अमृत से लबालब भर गया है। अब मन भी इधर-उधर भागता नहीं है -

अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ ॥
अंग - 1291

अब जपने की जरूरत नहीं है बल्कि तुम्हारी आँखें भी जप रही हैं, कान भी जप रहे हैं क्योंकि तुम्हारे अन्दर एक विशेष समझ विकसित हो चुकी है। अब तो परमात्मा प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ रहा है और जिस आदि से तुम बिछुड़े थे, वहीं पर पहुँच गए हो -

जा के संग ते बीछुरा ता ही के संगि लागु ॥
अंग - 1371

उसी के साथ जुड़ गया।

सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु ॥
सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ॥
अंग - 1291

लेकिन शब्द की खोज के बिना यह घर मिलता ही नहीं है। अतः मैंने जो यह इतनी लम्बी चौड़ी विचार की है, इसका तात्पर्य यह है कि -

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
एते चानण होदिआँ गुर बिनु घोर अंधार ॥
अंग - 463

गुरू के पास दृष्टि का करिश्मा होता है, बिना गुरू की दृष्टि से अपने आप व्यक्ति वहाँ पर पहुँच ही नहीं सकता है। यदि तुम वेदान्त के ग्रन्थ को पढ़ लो तो तुम्हें सारी बात समझ में आ जाएगी लेकिन जब तक उस पर अमल नहीं करोगे, तब तक कोई भी प्राप्ति असम्भव है। यानि कि तुम्हारे अनुभव में बात नहीं आ पाई है। आम को जान लिया कि इसके अन्दर कितनी कैलोरीज है, कितना मीठा है, इसमे कितना एसिड है, कितने पौष्टिक तत्व हैं। दूसरी तरफ एक व्यक्ति ने कुछ भी जाना नहीं है, उसने आम को तोड़ा और चूसना शुरू कर दिया। दोनों में इतना ही फर्क है। एक व्यक्ति ने तो प्रायोगिक जीवन शुरू कर दिया है जबकि दूसरा अभी सोचता ही जा रहा है। पढ़ने-लिखने वाले तो बाहर खड़े सोच ही रहे हैं लेकिन जो अभ्यास करते हैं उनके पास तो प्रत्यक्ष रूप में चीज प्रकट हो जाया करती है। महाराज जी कहते हैं कि -

सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ॥
जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ॥
इते चानण होदिआँ गुर बिनु घोर अंधार ॥

अतः गुरू के बिना आन्तरिक अन्धकार दूर नहीं हो पाया करता है।

इस प्रकार वह योगी कहने लगा, यह समय कौन सा आ गया है?

सिक्खों ने कहा, कल्युग का समय आ गया है।

योगी - इस समय प्रताप किस का है?

सिक्ख - इस समय गुरू अरजन पातशाह जी का है।

योगी - धन्य मेरा गुरू और धन्य अरजन पातशाह।

सिक्ख - क्या हुआ?

योगी - प्रेमीपुरुष! मेरा गुरू त्रिकालज्ञ था, लाखों सालों के भविष्य के समय को वह वर्तमान में खींच कर देखने में समर्थ था। मैंने उससे पूछा था कि मेरा कल्याण कैसे होगा? उसने बताया था कि कल्युग के अन्दर अरजन पातशाह जी होंगे वे तुम्हारा कल्याण करेंगे। उसने समय को खींच कर देख लिया था कि उस समय कौन गुरू होगा और कौन इसका कल्याण करेगा। साधु संगत जी! यह भी धुर दरगाह के संयोगों की बात हुआ करती है -

जिन मसतकि धुरि हरि लिखिआ
तिना सतिगुरु मिलिआ राम राजे ॥ *अंग - 450*

गुरू के साथ संयोग पूर्वजन्म के पुण्य कर्मों के फल की बदौलत हुआ करता है। यदि मस्तिष्क में गुरू का मिलाप लिखा हुआ हो तभी गुरू के साथ मिलाप हो पाया करता है, अन्यथा गुरू का मिलाप नहीं हुआ करता है -

अतः महाराज जी! अब मेरे कल्याण का समय आ गया है। मेरे गुरू जी ने मुझसे कहा था कि तुम समाधि लगाकर बैठ जाओ, वे समर्थ गुरू हैं, तुम्हें मठ में से अपने आप ही

बाहर निकाल लेंगे। अतः मैं अपने गुरू पर से कुर्बान जाता हूँ, जिन्होंने मुझे यह मार्ग बतला दिया था। अब आप मेरे ऊपर कृपा करो, मेरे भ्रमों को दूर करो। जब मैंने अपने गुरू से जो सवाल किए थे तो उन्होंने कहा था कि इन सवालों का जवाब कल्युग के अन्दर गुरू अरजन देव जी देंगे।

कल्युग का पुण्य इतना जबरदस्त होगा कि सत्युग के अन्दर दस हजार साल की तपस्या, त्रेता युग के एक हजार साल की तपस्या के बराबर होगी और त्रेता युग की एक हजार साल की तपस्या द्वापर के सौ साल की तपस्या के बराबर होगी। इसी प्रकार से द्वापर युग की सौ साल की तपस्या कल्युग की एक घड़ी की तपस्या के बराबर होगी। कल्युग के अन्दर तारक मन्त्र इतना अधिक फलीभूत होगा-

एक चित जिह इक छिन धिआइओ
काल फास के बीच न आइओ। अकाल उसतति

गुरू जी कहते हैं कि एक क्षण ध्यान देने से व्यक्ति काल के चक्कर से छूट जाता है। मुक्ति प्राप्त कर लेता है, अतः समय भी आ गया। गुरू जी कहते हैं कि धन्य है कल्युग जिसमें थोड़ा सा पुण्य करके भी, चार घड़ियाँ संगत करके भी, दस हजार वर्ष की तपस्या के बराबर हो जाता है क्योंकि अब हमारे पास इतना ही समय है। यही कारण है कि महाराज जी ने, कल्युग को धन्य कहा है, निःशंक रूप से कल्युग में पापों की बहुत बड़ी बाढ़ आई हुई है लेकिन दूसरी तरफ जो टीका है वह भी कितना जबरदस्त है। गुरू जी कहते हैं कि यदि एक बार भी कह दिया -

अजामल कउ अंत काल महि नाराइन सुधि आई ॥ जाँ गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥
अंग - 902

अतः पातशाह जी! अब मेरे ऊपर कृपा करो, मेरी शंका को निवृत्ति करो और मेरी तो शंकाएँ भी दृढ़ हो चुकी हैं, जैसे कि संसार यदि झूठा है तो फिर सच्चा क्यों दिखाई पड़ता है। यदि हम मान लें यह सच्चा है, तो ज्ञानवान पुरुष व सारे महापुरुष इसे झूठा कहते हैं, सपना कहते हैं। अतः यहाँ तो एक आत्मा ही सर्वत्र परिपूर्ण है, उसी ने अनेकों रूप धारण किए और अनेकों ख्यालों के साथ वह आत्मा कैसे कार्य करने लग पड़ी? जब सभी शरीरों में एक ही आत्मा है तो फिर एक समय में एक ही बात सबके अन्दर होनी चाहिए, फिर सभी शरीरों के अन्दर अलग-अलग बात क्यों हो रही है? सच्चे पातशाह जी! जब सबके अन्दर एक ही आत्मा है तो फिर जब एक आत्मा को ज्ञान हो गया तो फिर सभी आत्माओं को ज्ञान क्यों नहीं हो जाता है? इस प्रकार ये बेशुमार शंकाएँ व सन्देह है। अतः आप कृपा करके मेरी शंकाओं की निवृत्ति करो।

दूसरी बात यह है कि परमात्मा को अचल कहा जाता है जबकि ये सारे जीव तो जंगम हैं, ये सभी तो चलते-फिरते रहते हैं तो फिर परमात्मा अचल कैसे हुआ? जो यह संसार है इसे ज्ञानवान पुरुष कहते हैं कि ये तो परमात्मा है। अब यह बहुत बड़ा अन्तर बन गया है। हमारी बुद्धि तो इसे मानती ही नहीं है कि ये संसार नहीं बल्कि परमात्मा है। विद्वान लोग इस चीज को अभिन्वेष कह देते हैं। बुद्धि इस बात को स्वीकार ही नहीं करती है। साधु संगत जी! बुद्धि इस चीज को माना ही नहीं करती है। श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी कितने ही वचन करते जाएँ लेकिन हम लोग मान ही नहीं सकते हैं। हम लोग मत्थे टेकेंगे, स्टेजों पर खूब हो-हल्ला मचाएँगे कि ये श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी हैं लेकिन स्वयं नहीं मानेंगे। गुरू तो कहता है कि यहाँ पर परमात्मा के सिवाए दूसरा कोई है ही नहीं -

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं ॥
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू ॥ अंग - 1291

तुम्हें क्यों नहीं इस प्रकार से दिखाई पड़ता है? सिक्ख कहने लगे, महाराज जी! इस असमंजस की स्थिति में से हम कैसे निकलें? दूसरी बात यह है कि इसका जो अपना स्वरूप है -

आतमा परातमा एको करै ॥
अंतर की दुबिधा अंतरि मरै ॥ अंग - 661

यह ब्रह्म-साक्षात्कार कैसे होता है? अतः ये सारे प्रश्नोत्तर मैंने पिछली बार दिए थे और अब भी मैं विनती करता हूँ कि जब बात करने का समय आता है तो इधर समय समाप्त हो जाता है यानि कि घड़ी वहाँ पर आ पहुँचती है कि अब तुम आगे बात को न बढ़ाओ क्योंकि समय बहुत हो गया है। अब आगे यदि महाराज जी कृपा करेंगे तो फिर इस पर विचार की जाएगी।

चूंकि अब समय अनुमति प्रदान नहीं कर रहा है, इसलिए अब यहीं पर समाप्ति है। सारे प्रेमीजन आनन्द साहिब व गुरू स्त्रोत में बोलने की कृपा करो।

पड़िअै नाही भेदु बुझिअै पावणा।।

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 22)

श्री गुरू नानक देव महाराज जी कहने लगे, मरदाना! बहुत लम्बे समय से तुम हमारे साथ रह रहे हो, तुम एक बात बताओ कि तुम्हें अपने जीवन का कितना भरोसा है?

कहने लगा, महाराज जी! पहले वाली बात भी बताऊँ या फिर अब वाली ही बताऊँ?

महाराज जी - चाहे किसी भी प्रकार बता लो हमने तो बात पूछनी है।

कहने लगा, महाराज जी! पहले तो मुझे इस प्रकार से प्रतीत होता था कि अब मैं बच्चा हूँ (जिस समय कि अपने लोग खेला करते थे) फिर मैं जवान होऊँगा, उसके बाद वृद्ध होऊँगा, तत्पश्चात कोई बीमारी वगैरह लगेगी, तब कहीं मुझे मौत आएगी।

महाराज जी - अब कैसे लगता है?

मरदाना - महाराज जी! अब तो ऐसे लगता है कि सुबह के समय हैं, शाम को पता नहीं, है या नहीं।

महाराज जी - वाह! तुम्हें तो अपने श्वासों पर चार पहरों का भरोसा है, तुम्हें तो बहुत अधिक भरोसा है?

कहने लगा, महाराज जी! बीमार वगैरह होते-होते मैंने कइयों को मरते हुए देखा है। लगभग चार पहर तो मरते-मरते लग ही जाते हैं। उस समय लोग तगड़े होते थे, इसलिए हृदय गति रुकने की तो बात ही नहीं थी। ये सब तो अभी होने लगा है।

भाई बाला जी को महाराज जी ने पूछा, भाई बाला! तुम्हें कितना भरोसा है?

वह बोला, महाराज जी! इस पहर तो हैं, अगले पहर का पता नहीं है।

महाराज जी बोले, वाह! यह भी तीन घंटों का भरोसा है, यह भी काफी लम्बा भरोसा है।

वाला जी - महाराज जी! इतना समय तो लग ही जाता है, कठिन-कठिन श्वास आने लगते हैं, फिर कुछ समय बाद पता लगता है कि अमुक व्यक्ति मर गया है।

जब बाबा बुड्ढा जी को पूछा तो वे कहने लगे, महाराज जी! भरोसा किस बात का है, इस घड़ी हैं, अगली घड़ी का पता नहीं है।

गुरू जी कहने लगे घड़ी भी तो साढ़े 24 मिनट की होती है, यह भी काफी भरोसा है।

वे कहने लगे, महाराज जी! यदि श्वासों को खींच खींच कर भी ले और एक मिनट में दो श्वास भी ले तो भी लगभग पचास श्वास ही हुए। इतने तो आ ही जाते हैं। सभी इकट्ठे हो गए और कहने लगे, महाराज जी आप बताओ?

महाराज जी कहने लगे, प्रेमीजनो! जिन्दगी का क्या भरोसा है? इस प्रकार से पढ़ लो -

धारना - इक दम दा भरोसा कोई ना,
दाहवे बंने मुदताँ दे।

महाराज जी बोले, हम लोगों को क्या कहा जाता है? सारे सोचने लग पड़े।

गुरू जी ने कहा, हम लोगों को 'आदमी' कहा जाता है न? इसका सन्धि विच्छेद कर लो। 'आ' को अलग कर लो और 'दमी' को अलग कर लो फिर क्या बना? आ+दमी यानि कि यदि दम (श्वास) आ गया तो आदमी और यदि न आया तो हम लोग मुर्दे हैं। अब जो अक्षर 'अ' से शुरू होता है फिर वह 'म' से शुरू हो जाएगा।

अब इस बात का क्या भरोसा है कि बाहर को गया हुआ श्वास लौट कर आए या न आए? इस प्रकार के उदाहरण हम लोग अपने दैनिक जीवन में देखते ही रहते हैं।

जब मैं यहाँ पर सेवारत था तो उस समय दो कर्मचारी आपस में लड़ रहे थे। टाइप की मशीन उनके हाथ में थी एक कह रहा था कि मैंने टाइप करनी है, दूसरा कह रहा था कि पहले टाइप मैं करूँगा क्योंकि मेरी तो चिट्ठी एक ही है जबकि तुम्हारा काम लम्बा है। दूसरा बोला अच्छा तुम

ही कर लो। उसने मशीन अपने मेज पर रखी। रोलर में कागज लगाया, कार्बन लगाया और टाइप करने के लिए फाइल खोल कर रख ली तथा टाइपराइटर पर अपनी अंगुलियां रख लीं। उसके बाद उसने अपनी कुर्सी की बैक के साथ अपना सिर टिका लिया, जब उसने काफी देर अपनी अंगुलियाँ चलाई ही नहीं तो दूसरा व्यक्ति बोला, बन्धु! तुम जल्दी से टाइप कर लो वरना मैंने मशीन उठा लेनी है। तुम तो गहरी सोच में ही पड़ गए लग रहे हो?

जब उधर से कोई जवाब ही नहीं आया तो वह उठ कर मशीन उठाने लगा तो उसने उस व्यक्ति को जब हिलाया तो वह मृत था। इसलिए महाराज जी कहते हैं -

हम आदमी हाँ इक दमी मुहलति मुहतु न जाणा ॥

अंग - 660

इसकी तो कुछ भी गारंटी नहीं है। जब गारंटी ही नहीं है तो फिर प्रेमीजनो! हमें तो बहुत अधिक फिक्र होना चाहिए क्योंकि हमें तो पता ही नहीं है कि हमने संसार से कब चले जाना है। दूसरी तरफ यह व्यक्ति तो संसार से चले जाना मानता ही नहीं है। अब कई लोग कहने लग पड़ते हैं कि ये तो निराशाजनक विचार हैं। साधु संगत जी! ये निराशाजनक विचार नहीं हैं बल्कि एक अटल सच्चाई है। महाराज जी कहते हैं कि तुम कर्म तो करते रहो, लेकिन उम्मीदें बहुत बड़ी-बड़ी मत रखो। जितने दिन यह मशीन चल रही है, ठीक है, लेकिन बुरे कार्य मत करो -

अैसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईअै ॥

अंग - 918

इस प्रकार के कार्य मत करो, जिनके कारण तुम्हें बाद में पश्चाताप करना पड़े -

अैसी कला न खेडीअै जितु दरगह गइआ हारीअै ॥

अंग - 469

इस प्रकार के कार्य करो जिन्हें करके हमें दरगाह में जाकर शर्मिन्दा न होना पड़े। उम्र चाहे कम है या ज्यादा है, यह घट या बढ़ नहीं सकती है। यह तो पहले से ही लिखकर दी गई होती है, बाकी तो व्यक्ति के यत्न हैं, यह दौड़धूप करता ही रहता है। धन्वन्तरी वैद्य, औषधि विज्ञान का अपने समय का बहुत ही माहिर व्यक्ति था। वह कहता था कि मैं नहीं मर सकता हूँ क्योंकि मेरे पास ऐसी दवाइयाँ हैं, जिनकी बदौलत मैं पुनः जीवित हो जाऊँगा।

राजा परीक्षत को एक ऋषि का शाप हो गया कि तुमने आठ दिनों के अन्दर साँप के लड़ने से मर जाना है। उस समय राजा परीक्षत ने धन्वन्तरि वैद्य को याद किया क्योंकि साँप के डसने का इलाज उसके पास था। इसलिए वह मुझे जिन्दा कर देगा। इधर तक्षक नाग को हुक्म हो गया कि तुमने जाकर राजा परीक्षत को लड़ना है। यह साँपों की किस्म है जो कि इच्छाधारी है। यह छोटा भी हो जाता है और बड़ा भी हो जाता है तथा कुछ भी बन जाता है। कथा इस प्रकार से आती है कि जब तक्षक ने धन्वन्तरि वैद्य को देखा तो उसने पूछा वैद्य जी! तुम कहाँ जा रहे हो? वैद्य ने बताया कि राजा परीक्षत को साँप ने डसना है और मैंने उसे अपनी दवाइयों के द्वारा जीवित कर देना है। तक्षक बोला, तुम्हारे पास यह ताकत है कि तुम उसे पुनः जीवित कर सकते हो?

वैद्य ने कहा, पहले तुम बताओ कि तुम क्यों पूछ रहे हो?

वह बोला, मैं ही तक्षक नाग हूँ जो कि राजा परीक्षत को डसने जा रहा हूँ। हम लोग ऐसे करते हैं कि पहले अपनी ताकत ही देख लेते हैं कि तुम्हारे अन्दर कितनी ताकत है और मेरे अन्दर कितनी ताकत है। फलों से लदा हुआ वृक्ष था, तक्षक ने डंग मारा और सारा वृक्ष काला हो गया तथा उसके सारे फल गल गए। कहने लगा मेरे अन्दर इतनी ताकत है तुम अपनी ताकत दिखाओ?

धन्वन्तरि वैद्य बोला, मैं अभी दिखाता हूँ। उसने सारे वृक्ष पर अपनी दृष्टि घुमा दी, फलस्वरूप सारा वृक्ष पूर्ववत हो गया।

तक्षक मान गया कि यह तो वास्तव में ही शक्तिशाली है। अब धन्वन्तरि कुछ आगे गया तो यह (तक्षक) एक छड़ी सी बनकर रास्ते में लेट गया। धन्वन्तरि ने उसे छड़ी समझ कर उठा लिया और अपनी गर्दन पर खुजली करने लग पड़ा। उसने एक बात कही थी कि जहाँ तक मेरी निगाह जाती है मैं किसी भी साँप की जहर को उतार देता हूँ लेकिन जब वह छड़ी से खुजली करने लगा तो तक्षक ने वहीं पर डंक मार दिया। अब उसकी निगाह अपनी गर्दन के पीछे तो जा नहीं सकती थी इसलिए वह वहीं पर मर गया। तभी तो कहा जाता है कि -

जड़ी बूटी जे जीवीए किउं मरे धनंतरि।

इतना बड़ा वैद्य फिर क्यों मर गया? साधु संगत जी! यह सब तो पूर्वलिखित होता है। समय न घटता है और न बढ़ता है।

एक बार वेद व्यास जी का एक नौकर था। वेद व्यास जी त्रिकालज्ञ महापुरुष हैं, कारक महापुरुष हैं। अपनी मर्जी से संसार पर आना और अपनी मर्जी से यहाँ से वापिस लौट जाना, ऐसी एक अवस्था गुरुमुखजनों की हुआ करती है। वे

किसी के द्वारा भेजे हुए नहीं आते, अपितु वे परोपकारार्थ स्वेच्छा से आते हैं -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए॥
जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए ॥
अंग - 749

जब रूहानी विद्या में कोई गड़बड़ हो जाए तो उस समय उन्हें संसार पर आना ही पड़ता है।

इसका जो नौकर था वह बहुत ही अच्छी किस्म का नौकर था। वह बिना कहने से भी काम करता रहता था। वेद व्यास जी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि इसकी उम्र भी मेरे जितनी हो जाए। अब कारक की आयु 4 अरब 32 करोड़ वर्ष की होती है। वैसे महात्मा लोग इस चीज को कोई ज्यादा अच्छा नहीं मानते हैं। दरअस्ल संसार के अन्दर हम परोपकार को बहुत बड़ी चीज मानते हैं लेकिन परोपकार की जो वासना है, वह वासना अन्य चीजों की भांति ही इस जीव को बाँध लेती है। परोपकार की वासना होने से भी मनुष्य को कारक की योनि में जाना पड़ता है क्योंकि जो परोपकार की कामना करता है उसे कारक पद मिल जाता है।

साधु संगत जी! परोपकार भी कोई बुरी चीज नहीं है लेकिन इसकी वासना नहीं करनी चाहिए। बस जो कुछ भी हो रहा वह सहज में होना चाहिए। गुलाब के फूल को सुगन्ध देने के लिए वासना रखने की क्या जरूरत है? बस उसने तो सहज स्वभाव सुगन्ध देनी ही देनी है। उसके अन्दर तो सुगन्ध बाँटने का चश्मा ही चलता है -

ब्रहम गिआनी परउपकार उमाहा ॥ अंग - 273

जब चश्मा चलता है तो तो वह यह नहीं सोचता रहता है कि मैं चलता रहूँ और लोग मेरे द्वारा अपनी प्यास बुझाते रहें। बस उसका तो स्वभाव ही है कि वह सहज स्वभाव चलता ही रहता है। अतः जो परोपकार सहज स्वभाव चलता है वह मनुष्य को बाँधा नहीं करता है लेकिन जो शपथ लेकर ही करता है, वह उसे बाँध लेता है। जो यह कहता है कि मैं स्कूल बना रहा हूँ, मैं अस्पताल बना रहा हूँ, मैं गुरुद्वारा बना रहा हूँ वह 'मैं' उसे बाँध लेती है। अब जो कर्म 'मैं' के द्वारा किया जाता है, उन्हें तो फिर अवश्य ही भोगना पड़ता है।

दूसरी तरफ जो ब्रह्मज्ञानी होता है उसकी 'मैं' तो पूर्णतः समाप्त हो चुकी होती है। वह चलता-फिरता तो दिखाई पड़ता है, काम करता भी दिखाई पड़ता है लेकिन वह स्वयं परमात्मा ही हुआ करता है। कारक को चार करोड़ बत्तीस हजार साल के लिए फिर आना ही पड़ता है। इस प्रकार वेद व्यास जी अपने नौकर को ब्रह्मा जी के पास ले गए कि आप इसकी आयु को मेरे बराबर ही कर दो। मैं जिस समय मर्जी के साथ आऊँ तो यह भी उसी समय आए। ब्रह्मा जी कहने लगे, वेद व्यास जी! यह चीज मेरे वश में तो है नहीं, इसके लिए आप शिवजी के पास जाओ। जब वे शिवजी के पास गए तो उन्होंने भी अपनी असमर्थता जताते हुए उन्हें 'काल' के पास भेज दिया। काल महाराज जी कहने लगे कि मुझे तो यमराज जी का आदेश मिलता है कि अमुक व्यक्ति को लेकर आओ और हम ले आते हैं। इसके बाद वे यमराज जी के पास चले गए नौकर भी उनके साथ हैं। यमराज जी ने कहा कि मेरे पास तो चित्रगुप्त अपना लेखा भेजते हैं कि उसकी आयु समाप्त हो गई है और मैं परमात्मा के हुक्म को मानता हूँ। वे कहने लगे चलो फिर चित्रगुप्त को ही पूछ लेते हैं। जब चित्रगुप्त को बुलाकर पूछा कि बताओ इसकी कितनी उम्र है?

चित्रगुप्त ने बताया कि यह जो जीव है इसकी मृत्यु के कारण, मृत्यु की जगह व मृत्यु के समय के बारे में इस प्रकार से लिखा हुआ है कि जिस समय व्यास जी, ब्रह्मा जी, शिव जी, काल महाराज तथा यमराज जी इकट्ठे होकर चित्रगुप्त को यह पूछेंगे कि इसकी उम्र कितनी है? तो उस समय वह दरगाह में ही होगा और ठीक यही समय है, अतः जब उसकी मृत्यु होनी अवश्यम्भावी है। जब बाहर जाकर देखा तो वह मरा पड़ा है।

महाराज जी कहते हैं कि संसार के अन्दर कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो यहाँ सदा के लिए रह जाए। प्रत्येक को यहाँ से जाना ही पड़ता है। यहाँ पर विडम्बना की बात यह है कि सारा कुछ व्यक्ति को पता है कि यहाँ से जाना निश्चित है लेकिन फिर भी यह भजन बन्दगी नहीं करता है।

गुरू नौवें महाराज जी को यही प्रश्न सिक्खों ने पूछा महाराज जी! सब कुछ पता होने के बाद भी यह व्यक्ति भजन बन्दगी क्यों नहीं करता है? महाराज जी कहने लगे, प्रेमीजनो! सबसे बड़ा कारण यह है कि यह जीव इस चीज को मानता ही नहीं है कि मैंने यहाँ से चले जाना है। इसके द्वारा इस तथ्य को न मानने के कारण यह झूठे लालचों में फँसकर अपने जीवन को यूँ ही बर्बाद करके लौट जाता है-

धारना - नहीओं मरन पछाणदा,
झूठे लालच लग के बंदा।

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ॥ छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ॥ 1॥ रहाउ ॥ हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥ झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥ 1 ॥ अजहू कछु

बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ॥ कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ॥ अंग - 727

महाराज जी ने फुरमान किया कि प्रेमीजनो! बड़ा कारण यह है कि यह व्यक्ति भजन-बन्दगी इसी वजह से नहीं करता है क्योंकि उसे यह भरोसा ही नहीं है कि उसने संसार से कभी जाना है। जिस प्रकार से वाहिगुरू जी प्रत्येक व्यक्ति के साथ रहते हैं लेकिन इसे भरोसा ही नहीं आता है कि वह इसके साथ है। इसी प्रकार से यह उसे विश्वास ही नहीं है कि उसे मृत्यु ने यहाँ से विदा कर देना है और यही कारण है कि यह व्यक्ति सांसारिक तौर पर बुद्धिमान होते हुए भी वास्तविक तौर पर मूर्खों की श्रेणी में ही आ जाता है। महाराज जी इसे सचेत करते हुए कहते हैं कि 'चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी।।' यदि तुमने जीवन से कुछ हासिल करना है तो दिन-रात लग कर परमात्मा का भजन कर लो। 'छिन छिन अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी।।' एक आँख झपकने में जितना समय लगता है उसका पन्द्रहवां हिस्सा, एक क्षण हुआ करता है यानि कि प्रत्येक क्षण मनुष्य के अन्दर परिवर्तन आ रहा है। प्रत्येक क्षण प्रत्येक चीज में परिवर्तन आ रहा है। क्षण तो बहुत बड़ी चीज है यदि क्षण का लाखवां हिस्सा भी कर लो तो भी प्रकृति में परिवर्तन आ रहा है। वह प्रत्येक समय घट या बढ़ रही है। इस मनुष्य की तीन अवस्थाएँ हैं। बचपन के अन्दर बढ़ना शुरू करता है जवानी तक बढ़ता रहता है, फिर थोड़ी देर टिकता है, वैसे उसे पता नहीं लगता है, वह उस समय भी घटना शुरू हो जाता है। इसके बाद तो फिर बुढ़ापा आना ही है। उस समय तो सबको पता ही होता है कि मेरे घुटने दर्द कर रहे हैं, मुझसे खड़ा नहीं हुआ जाता है। मुझसे चला नहीं जाता है, मुझे रोटी हज्म नहीं होती है, मेरा कान दर्द करता है, मेरी निगाह काम नहीं करती है।

महाराज जी कहते हैं, भद्रपुरुष इस अवस्था को याद रखो, बुढ़ापे को याद रखो -

जब लगु जरा रोगु नही आइआ ॥
जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ ॥
जब लगु बिकल भई नही बानी ॥
भजि लेहि रे मन सारिगपानी ॥ अंग - 1159

गुरू जी के हुक्म को हम कितना मानते हैं? बिल्कुल नहीं मानते हैं। गुरु जी के हुक्म तो परम सत्य हैं लेकिन हम उनके हुक्म को क्यों नहीं मान पाते हैं?

इसका कारण बताते हुए गुरू जी फुरमान करते हैं कि दूसरी तरफ जो माया की शक्ति है, अज्ञानता की, भ्रम की अविद्या की, वह इतनी सख्त है कि इसे वाहिगुरू तो कहीं पर दिखाई ही नहीं पड़ता है, केवल विचारवान को ही वह दिखाई पड़ता है। वह साथ में रहता हुआ, सारे कार्य करता हुआ दिखाई ही नहीं पड़ता है। दूसरी तरफ जो कुछ भी नहीं करता है, वह सत्य प्रतीत होता है। यह एक वृत्ति हुआ करती है, इसे अभिन्वेष कहते हैं यानि कि इस वृत्ति वाला सत्य को सत्य नहीं मानता है। बस यही मुख्य कारण है। गुरू महाराज जी कहते हैं, तुम्हें तो भजन बन्दगी करने की ठान लेनी चाहिए क्योंकि तुम्हारी उम्र उसी प्रकार से बीतती जा रही है जैसे कि टूटे घड़े में से पानी निकलता जाता है। चौबीस हजार श्वासों का घाटा नित्य प्रतिदिन इसे पड़ जाता है। फिर विचार कर देखो कि एक श्वास की कीमत कितनी होती है। इसके ऊपर तुम्हें गहरा ध्यान देना चाहिए।

इतिहास के अन्दर ऐसी एक कथा आती है कि विश्व विजेता सिकन्दर, भारतवर्ष में पोरस राजा को जीतने के बाद जब व्यास दरिया को पार करने लगा तो आगे प्रेजीडेंट रण सिंह का पंचायती राज था। फौज ने पूछा कि अब कौन से राजा के साथ युद्ध करना है? क्योंकि अब राजा तो कोई शेष बचा ही नहीं है, बस अब तो पंचायतों को राज्य आ गया। पंचायत का जो मुखी है वह रण सिंह है। सिकन्दर ने कहा कि फिर इसके साथ लड़ने का क्या फायदा है? क्योंकि यदि हमने उसे पकड़ लिया तो पंचायत फिर नया चुन लेगी। यदि हम उसे पुनः पकड़ लेंगे तो पंचायत फिर नया चुन लेगी। यदि हमने सारी पंचायत ही पकड़ ली तो फिर लोग फिर से नई पंचायत बना लेंगे। इसकी तो कोई सीमा ही नहीं है, इसलिए हम इसके साथ नहीं लड़ेंगे। अतः फौज ने मना कर दिया। सिकन्दर ने अपनी फौज को बहुत समझाया लेकिन वह नहीं माना। अन्त में सिकन्दर को वापिस लौट जाना पड़ा। सिन्धु दरिया के बीच से वह अपनी फौज को लेकर गया। समुद्र मार्ग के माध्यम से जब उसका जहाज बावनकुण्टी पर पहुँचा तो उसने वहाँ पर स्नान कर लिया, फलस्वरूप गर्म-सर्द हो गया। तगड़ा तो था ही उसने बीमारी की तरफ विशेष ध्यान ही नहीं दिया। बस उसे एक ही ख्याल था कि मैं जल्दी से यूनान वापिस लौट जाऊँ। लेकिन उसका स्वास्थ्य बहुत खराब हो गया। उसने ज्योतिषविदों का बुलाया और कहा कि देखो, मेरी मृत्यु ही नजदीक तो नहीं आ गई? क्योंकि मृत्यु से तो सबको डर लगता है। बस कोई एकाध व्यक्ति ही ऐसा है जो मृत्यु से नहीं डरता है, अन्य सारा संसार तो मौत से डरता ही रहता है। वह व्यक्ति मृत्यु से नहीं डरता है, जिसने कि मृत्यु के उस पार जाकर जीवन शुरू कर लिया है -

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरै मनि आनंदु ॥
मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु ॥ अंग - 1365

शेष सारा संसार तो मृत्यु से बहुत अधिक डरता है क्योंकि उसे अपने आगे अन्धकार ही दिखाई पड़ता है। उसे कुछ भी पता नहीं लगता है कि मरणोपरान्त कहाँ जाएंगे? क्या हाल होगा? यही कारण है कि सारा संसार मृत्यु से भयभीत रहता है।

जब ज्योतिषविदों ने हिसाब किताब लगाकर देखा तो वे हैरान रह गए। बादशाह सिकन्दर ने कहा कि बताओ?

वे कहने लगे, हम कुछ भी समझ नहीं पा रहे हैं।

सिकन्दर ने कहा कि प्रेमीजनो, आप लोगों को जो भी समझ में आया है, उसे बतलाओ?

ज्योतिष कहने लगे, बादशाह सलामत! हमारी गणना के अनुसार जब धरती लोहे की बन गई और आसमान सोने जैसा बन गया तो उस समय तुम्हारी मृत्यु आ जाएगी। न तो सिकन्दर को इस बात की कुछ समझ आई और न ज्योतिषविदों को ही कुछ पता चला। अब वह अपनी लोहे के कवच (बुलेटप्रुफ जैकेट) को पहन कर तथा घोड़े पर चढ़ा हुआ जा रहा है। उसे जाते-जाते ही दिल का दौरा पड़ गया। पास में वृक्ष भी कोई नहीं है नीचे धरती गर्म है। जब वह उस गर्म धरती पर ही गिर पड़ा तो उसके अंगरक्षकों ने उसी की संजोअ (रक्षा कवच) को खोल कर नीचे बिछा दिया तथा साथ ही कुछ दवाइयाँ वगैरह देने लग पड़े, फलस्वरूप उसे थोड़ी से होश आ गई। उस समय जब इसने धरती को हाथ लगाया तो वह हैरान हो गया क्योंकि नीचे लोहा बिछा हुआ था। उसने सोच लिया कि मेरा तो अन्तिम समय निकट आ गया है। यही बात उसे समझ में नहीं आ रही थी, जब उसने ऊपर की ओर देखा तो ऊपर सारा आसमान उसे सोने का दिखाई पड़ा क्योंकि धूप से बचाने के लिए उसी की ढाल को बरछे पर टांगकर उसे छांव की गई थी और उसकी ढाल, सोने द्वारा निर्मित थी। जब वह युद्ध के मैदान में लड़ता था तो उसकी चमक से विरोधी की आँखें चुँधिया जाती थीं। अब जो सोने की ढाल द्वारा छाया उसके मुँह पर की हुई है और उससे टकरा कर जो सूर्य की किरणें आ रही है, तो वे सोने के रंग वाली प्रतीत हो रही हैं। उस वक्त सिकन्दर रोने लग पड़ा। वह हकीमों को कहने लगा कि येन-केन-प्रकारेण मुझे दवा देकर मेरे घर तक पहुँचा दो क्योंकि मैं अपनी माँ से मिलना चाहता हूँ। मैं बीस साल की आयु में घर से निकला था और अब बत्तीस साल का हो गया हूँ। मैं अपनी माँ के साथ बहुत सारी बातें करना चाहता हूँ। हकीम चुप रहे, वे कुछ भी बोल नहीं रहे हैं। फिर वह बोला मैं तुम लोगों को (हकीमों को) अपना आधा राज्य दे दूँगा।

वे उस समय भी नहीं बोले।

वह बोला, अच्छा फिर सारा ही राजभाग ले लो, बस मुझे मेरी माँ तक पहुँचा दो।

जो सबसे बड़ा हकीम था, वह कहने लगा, बादशाह जी! संसार का राजभाग भी दे दो तब भी हम तुम्हें एक श्वास भी नहीं दिलवा सकते हैं। अब तुम्हारे श्वास की गाँठ खुल चुकी है, इसलिए अब तो तुम्हारा एक श्वास भी बढ़ नहीं सकता है।

उस समय वह बहुत ऊँची आवाज में रोने लग पड़ा। वह कहने लगा, मेरा पन्थनामा लिखो और मेरे जाने के बाद संसार को मेरी कथा सुनाया करना कि मैंने गाफिल होकर यूँ ही अपना सारा जीवन बरबाद कर दिया। प्रेमीजनो यदि एक श्वास की कीमत तीन लोकों के राजभाग से भी कहीं अधिक है तो फिर मैंने तो अपने असंख्य श्वास यूँ ही बरबाद कर दिए।

श्वासों की कीमत कितनी है? यह बात आप अजामल से पूछ सकते हो। वह सारी जिन्दगी पापकर्म करता रहा -

पतित अजामलु पाप करि
जाइ कलावतणी दे रहिआ।

भाई गुरदास जी, वार 10/20

उसने वैश्या के पास जाकर रहना शुरू कर दिया। वह पण्डित या विद्वान था और असंख्य लोग उसे जानते थे। इसके साथ ही वह शास्त्रार्थ में दिग्विजयी था -

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ॥

अंग - 632

महाराज जी कहते हैं उसे सारा संसार ही जानता था, आखिर ऐसी बात हुई कि वह बहुत दुखी हो गया। महापुरुषों ने उसे दिलासा दिया और पुत्र का नाम नारायण रख दिया। जब उसका अन्तिम समय आया -

अंतकाल जमदूत वेखि पुत नराइणु बोलै छहिआ।

भाई गुरदास जी, वार 10/20

छोटा पुत्र पास में था, उसे आवाज लगाई। उसने कहा बेटा नारायण! विद्वान तो था ही, उस समय उसकी विद्या सामने आ गई। जिन महापुरुषों के चरणों में गिरा था, उन्होंने कृपा कर दी -

गुरु दुआरै जाइकै
गुरमुखि नाउ नराइणु कहिआ।

भाई गुरदास जी, वार 10/20

उस गुरुमुखजन यानि कि उसके महात्मा गुरू ने कृपा

कर दी, फलस्वरूप उसकी याददाश्त में यह बात आ गई कि मैं परमात्मा को आवाज लगाऊँ क्योंकि अब अन्य कोई तो इस स्थिति में मदद कर नहीं सकता था। इधर यमदूतों ने उसे पकड़ लिया और केवल एक श्वास शेष रह गया था। उसने आवाज दी, बेटा नारायण! आवाज देते-देते परमात्मा की तरफ उसका ध्यान चला गया। अब समय की सीमा देख लो कि कितने समय में एक श्वास आ जाता है। एक मिनट में बारह श्वास आते हैं। जिस समय व्यक्ति चलता है उस समय 18 श्वास आते हैं, सोते समय एक मिनट में चौबीस स्वास आते हैं और मैथुन के समय चौंसठ आते हैं। भाई गुरदास जी कहते हैं कि केवल एक श्वास शेष रह गया था यानि कि वह अन्तिम श्वास था और आधा ही रह गया था क्योंकि आधा श्वास तो पुत्र को आवाज मारते समय लग गया था और उसी श्वास ने वापिस लौटना था। बस, उस आधा श्वास के समय, उसकी सुरति नारायण की तरफ चली गई, वाहिगुरू की तरफ उसकी सुरति चली गई। अब वाहिगुरू जी ने कौन सा कहीं से आना या जाना है? यह तो हमें ख्याल ही नहीं रहता है कि वह प्रत्येक समय हमारे साथ ही है। अन्दर भी वही है और बाहर भी वही है -

सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥
घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥ अंग - 293

अजामल प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे॥
मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जमकंकर मारि बिदारे॥
अंग - 981

आधे श्वास के द्वारा परमात्मा की तरफ दिया गया ध्यान ही परमात्मा को अच्छा लग गया। परमात्मा जैसा सीधा तो इस दुनिया में कोई भी नहीं है, वह बहुत अधिक भोला है। सारी दुनिया ज्यादातर पापों में प्रवृत्त रहती है और फिर वह उस परमात्मा से याचना भी करती रहती है। महाराज जी कहते हैं -

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै ॥
अंग - 681

आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ॥
अंग - 2

सारा संसार प्रातःकाल से मांगने लग पड़ता है और रात तक मांगता रहता है कि मुझे यह दे दो, मुझे वह दे दो। वह देता ही चला जाता है, लेने वाले थक जाते हैं, लेकिन वह देने वाला थकता नहीं है। वह दाता है, दयावान है। यदि हमारे साथ कोई चालाकी करता है तो हम उसे कुछ नहीं देते हैं। हम कहते हैं कि यह तो बहुत चालाक है, इसे हम क्यों दे?

ऐसी एक कथा आती है कि मूसा जी ने भगवान को कहा कि आज मैं सबको आहार दूँगा। भगवान ने कहा, तुम सबको आहार का वितरण नहीं कर पाओगे क्योंकि मनुष्य के अन्दर राग और द्वैष दो बहुत बड़ी कमजोरियाँ हैं। जो अपने हित का हो, अपने ख्यालों का हो, उसे प्यार करता है तथा जो अपने हित और ख्यालों का न हो, उससे घृणा करता है क्योंकि अच्छे और बुरे की तुम्हारे अन्दर समझ है। गुरू जी कहते हैं कि यह समझ भी कुछ समय के लिए ही है। यदि व्यक्ति को ज्ञान हो जाए तो फिर अच्छे और बुरे की समझ भी समाप्त हो जाती है। फिर तो उसे कण-कण में परमात्मा ही दिखाई पड़ता है -

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता ॥
तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥ अंग - 610

अतः भगवान जी ने मूसा जी से कहा कि तुम्हारे अन्दर अच्छे और बुरे की समझ है, इसलिए तुम आहार का वितरण नहीं कर पाओगे। वह अनुभव करने लगा उसने सबको आहार बाँट दिया। भगवान ने पूछा, मूसा जी! सबको आहार दे दिया? मूसा जी ने कहा, हाँ महाराज जी! सबको तो दे दिया लेकिन एक को नहीं दिया। भगवान ने कहा, क्यों?

मूसा जी ने कहा, भगवन! यह ऐसा कुकर्म कर रहा था, जिसे कि मैं ब्यान नहीं कर सकता हूँ। वह पराकाष्ठा तक का बुरा कर्म था, निन्दनीय था।

भगवान ने कहा, मूसा जी! फिर तुम सबको रोजी देने वाले नहीं बन सकते हो क्योंकि आहार तो सबको बिना भेदभाव के ही वितरण करना चाहिए। अतः साधु संगत जी! भगवान बहुत भोला है और भोले लोगों को ही परमात्मा मिल पाता है चालाक लोगों को वह नहीं मिल पाता है। यथा -

चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ ॥ अंग - 324

भाई गुरदास जी कहते हैं कि केवल आधा श्वास रह गया था और उसी दौरान उसका ध्यान परमात्मा की तरफ चला गया -

अजामल कउ अंत काल महि नाराइन सुधि आई ॥ जाँ गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥
अंग - 902

बड़े-बड़े योगीजन गुफाओं में बैठ कर भजन-बन्दगी करते हैं, तप साधना करते हैं, अपने ऊपर गर्मी-सर्दी व भूख-प्यास को सहन करते हैं ताकि उन्हें परम पद की प्राप्ति हो जाए लेकिन अजामल को वह पदवी आधे श्वास के समय

में ही मिल गई, फिर श्वास की कितनी कीमत हुई? गुरू जी कहते हैं कि इसे बर्बाद मत करो -

सास सास हरि नाम जप बिरथा सास मत कोइ।
किआ जानहु कि अंत को इही सास मत होइ।

क्या पता है कि यही श्वास अन्तिम न हो? अत: महाराज जी कहते हैं कि क्षण-क्षण करके तुम्हारी आयु बीतती जा रही है और इसने इसी तरह से एक दिन समाप्त हो जाना है जैसे कि फूटे हुए घड़े में पानी का रिसाव होते-होते वह एक समय खाली हो जाता है। इसीलिए गुरू जी हमें चेतावनी देते हैं कि -

हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥
अंग - 726

तुम कितने मूर्ख और अनजान हो? वे हरि के गुण जिन्होंने तुम्हारी सहायता करनी है, उनके लिए तो तुम -

रे मूड़े लाहे कउ तूं ढीला ढीला तोटे कउ बेगि धाइआ॥
अंग - 402

जहाँ पर तुम्हें हानि होनी है, वहाँ पर तो तुम दौड़ते फिरते हो लेकिन जहाँ पर हानि होनी है, वहाँ पर तुम आलस्य को धारण कर लेते हो। नाम जप करने के समय -

चंगिआइंी आलकु करे बुरिआइंी होइ सेरु ॥
अंग - 518

बुराई के समय तो शेर बन जाते हो, तुम इतने बड़े मूर्ख और अनजान हो?

महापुरुष समझाने के लिए एक कथा सुनाया करते थे कि एक राजा था, उसकी रानी बहुत ही ज्ञानवान थी। वह कहा करती थी कि राजन्! आप परमात्मा का भजन किया करो। परमात्मा का भजन करने का शुभ समय होता है - ब्रह्ममुहुर्त। आप रात को जल्दी सो जाया करो और ब्रह्ममुहुर्त में उठकर भजन किया करो क्योंकि मरणोपरान्त यह हमारा मददगार होगा। उसने सारी बातें ध्यानपूर्वक सूनीं और कहने लगा, ठीक है, मुझे ब्रह्ममुहुर्त में जगा देना। जब सुबह हुई उसने जगाया तो वह पुनः कपड़ा ओढ़कर सो गया। यही कार्यक्रम रोज ही चलता रहा। रानी उसे रोज ब्रह्ममुहुर्त में जगाती लेकिन राजा आलस्य में पड़ा रहता। इसी प्रकार से धीरे-धीरे छः वर्ष बीत गए। रानी उसे जगाने से हटी नहीं और राजा ने जागकर भजन बन्दगी की ही नहीं। रानी को थोड़ा अफसोस हुआ। एक दिन वह कहने लगी, महाराज! आप मेरे पतिदेव हो, इसलिए मुझे ऐसी बात कहनी तो नहीं चाहिए, लेकिन वास्तविकता यही है कि आप मूर्ख हो। छः साल बीत गए हैं और बीता हुआ समय कभी वापिस आता है?

इह ठहिरन जाच न जाणदा
लंघ गिआ ना मुड़ के आँवदा। डा. भाई वीर सिंघ

इस समय में कितना भजन कर सकते थे, सोकर आपने क्या हासिल कर लिया है? वह बोला, क्या मैं मूर्ख हूँ?

रानी बोली, हाँ तुम मूर्ख हो।

जब सुबह हुई तो उसने दरबार लगा लिया। उसने वजीर को बुलाया और कहने लगा वजीर साहिब! मेरे राज्य में मूर्ख कितने हैं? वजीर बोला, महाराज जी! यदि आप यह पूछते कि मेरे राज्य में अक्लमन्द कितने हैं? फिर तो मैं बतला सकता था क्योंकि फिर हम सूचियाँ बना लेते। लेकिन अब हम सूची किस चीज की बनाएँगे क्योंकि मूर्खों की तो गिनती ही कर पाना मुश्किल है क्योंकि मूर्खों की गिनती तो बेशुमार है।

राजा - क्या? सारे मूर्ख हैं?

वजीर - हाँ महाराज जी! बुद्धिमान तो कोई विरला ही है, जबकि सारा संसार मूर्ख ही है।

राजा - अच्छा फिर, हमें बड़े-बड़े मूर्खों की सूचियाँ बना कर दो।

अब राजा के कर्मचारी मूर्खों की सूचियाँ बनाते घूम रहे हैं, वे एक गाँव में आ गए। वहाँ पर एक घर था, उसमें वे चले गए। कहने लगे प्रेमीजनो! राजा पूछ रहा है कि इस गाँव में मूर्ख कितने हैं? उन्होंने सोचा कि शायद राजा हम मूर्खों को कुछ दे ही दे, कोई जमीन ही दे दे, कोई पेंशन वगैरह ही लगवा दे। हमें तो आजतक किसी ने पूछा ही नहीं है, हमें तो सारी सभाएँ या सोसाइटियाँ दुत्कारती ही हैं। लगता है अब हमें भी कोई सम्मानजनक स्थान प्राप्त होगा। वहाँ पर एक परिवार आया वह कहने लगा, जनाब! हमारा नाम अवश्य लिख लेना। वजीर ने कहा कि तुम्हारे अन्दर क्या विशेषता है? दरअस्ल हम पहले विचार करते हैं कि तुम्हारा नाम इस सूची में दर्ज होगा अथवा नहीं? उन्होंने कहा, पहले हमारी कहानी सुन लो, उसके बाद तुम्हारी मर्जी है। उन्होंने कहा, अच्छा सुनाओ।

उन मूर्खों के पारिवारिक सदस्य ने बताया कि साथ के गाँव में हमारी ससुराल है, वहाँ पर मेरा साला परलोक सिधार गया। मैं हल चला रहा था, मैंने अपने बड़े बेटे को कहा कि यह बहुत ही पास का रिश्ता है, इसलिए तुम जल्दी से जाओ, अफसोस करके आओ। वह अफसोस करने के लिए चला गया। वहाँ पर सारे लोग इकट्ठे हुए थे। कुछ समय बाद वह

वापिस लौट आया। मैंने कहा, बेटा! वापिस आ गए? उसने कहा हाँ, पिता जी! मैंने कहा, तुमने वहाँ पर कोई वचन भी किया? उन्हें कोई सांत्वना भी दी थी? उसने कहा, नहीं पिता जी! मैंने वचन तो कोई भी नहीं किया। मैं तो चुपचाप गया और चुपचाप ही वापिस लौट आया। मैंने कहा यह तो तुमने बहुत गलत काम किया। मैं सोचता रहा और सोच-सोच कर मैंने अपने दूसरे बेटे को भेजा और उससे कहा कि मैंने तुम्हारे बड़े भाई को भेजा था, वह तो मूर्ख ही निकला इसलिए तुम जाओ। वह कहने लगा, पिता जी मैं तो कभी किसी की मृत्यु पर अफसोस करने के लिए गया ही नहीं, इसलिए मैं वहाँ जाकर क्या कहूँगा?

मैंने कहा, यह सब कुछ क्या किताबों में लिखा होता है कि यह कुछ बोलना है? जिस प्रकार से लोग बोलते होंगे, उसी प्रकार से तुम भी बातें कर लेना। जब वह वहाँ पर गया तो उनके घर से बाहर ही उनके कुछ विरोधी खड़े थे। कई गांवों से रिश्तेदारों की टोलियाँ आई हुई थीं उनमें से कुछ लोग बातें कर रहे थे कि यह जो व्यक्ति है जो इसकी मृत्यु हो गई है, यह बहुत ही अच्छा हुआ है। अब इनके परिवार के सदस्यों को मजा आएगा। अब ये अन्य लोगों के आगे हाथ जोड़ते फिरेंगे।

उसने इन बातों को याद कर लिया और आगे चला गया और जाकर कहने लगा, प्रेमीजनो! सबसे पहले मेरी बात सुन लो क्योंकि बाद में फिर मैं सारी बातों को भूल जाऊंगा। देखो! यह जो मेरा मामा मर गया है न यह तो बहुत ही अच्छा हुआ है क्योंकि अब इसका काँटा हमारे बीच से निकल गया है, मेरे नानका परिवार को अब पता चलेगा, जब ये रोटी-रोटी को माँगते फिरेंगे। वहाँ पर जो लोग बैठे हुए थे, खासतौर से जो उनके युवा लड़के थे, उन्हें बहुत अधिक क्रोध आ गया। फलस्वरूप उन्होंने मिलकर मेरे बेटे को खूब पीटा और कहने लगे कि यह बताओ कि हम लोगों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? एक तो हमारे यहाँ मृत्यु हो गई है और दूसरा तुम हमें चिढ़ाने के लिए आ गए हो? इस प्रकार से वह पिटाई खाकर वापिस लौट आया और उसके मुँह पर नील पड़े हुए थे। बापू हल चला रहा था। उसने पूछा क्या हुआ? वह बोला, यह देख लो आपके रिश्तेदारों ने क्या किया है।

मैंने कहा, बेटा! बिना कारण से तो कोई लड़ाई करता ही नहीं है, तुमने अवश्य कोई बुरी बात की होगी।

वह बोला, पिता जी! मैंने कोई भी गलत बात नहीं की। आपने ही मुझे कहा था, जिस प्रकार की बातें लोग कर रहे हों, उसी तरह से तुम भी कर लेना। जब मैंने उन्हीं बातों को वहाँ पर उपस्थित लोगों के बीच दोहराया तो वे कहने लगे कि तुम तो महामूर्ख हो।

इन बातों को सुनकर मैं उसी समय दौड़ता हुआ चला गया, बैल हाँकने वाली छड़ी भी मेरे हाथ में ही थी। मैंने सोचा कि मैं जल्दी से उन लोगों से माफी माँग आऊँ। मैंने वहाँ पर जाकर दोनों हाथ जोड़कर विनती की कि प्यारे भाइयो! मैं तो आप लोगों से क्षमायाचना करने आया हूँ क्योंकि पहले तो मैंने अपना बड़ा लड़का भेजा जो कि एक अक्षर भी नहीं बोला, फिर मैंने छोटे वाले को भेजा जिसके बारे में तुम लोगों को पता ही है कि उसने किस प्रकार की बातें कीं। उसकी इस प्रकार की बातों पर उसकी पिटाई का होना स्वाभाविक ही है, इसलिए मैं अब आप सबसे माफी माँगता हूँ। अब भविष्य में जो भी कोई तुम्हारा पारिवारिक सदस्य मरा करेगा तो अफसोस करने के लिए मैं अपने बेटों की बजाय स्वयं ही आया करूँगा। उस समय के बाद हमारा नाम ही मूर्ख पड़ गया है।

इस प्रकार से सारे लोग राजे के पास आ गए और सारे कहने लगे कि अब राजे की भी परख कर लो। राजा बीमार हो गया था। इजाजत लेकर सारे राजा के पास चले गए। राजा ने सोने के हत्थे वाली छड़ी दी हुई थी कि मूर्खों के प्रधान को यह छड़ी देनी है।

उन्होने राजा का हालचाल पूछते हुए कहा कि क्या बात हुई, महाराज जी?

राजा - लो भाइयो! मैं तो अब जा रहा हूँ। उन्होंने पूछा, कहाँ जा रहे हो?

राजा - यह तो पता नहीं है कि मैंने कहाँ जाना है।

वे पूछने लगे, आपके साथ कौन जा रहा है? क्या आपके सुरक्षाकर्मी या अंगरक्षक साथ जाएँगे?

राजा - नहीं

वजीर - महाराज जी! धन-पदार्थ साथ में ले जाएंगे?

राजा - नहीं।

वजीर - राजमहल आदि?

राजा - नहीं।

वजीर - रानियाँ?

राजा - नहीं।

वजीर - ये सारे कीमती वस्त्र?

राजा - नहीं, ये भी मेरे साथ नहीं जाएँगे।

वजीर तथा उसके सहकर्मियों ने कहा कि महाराज जी! फिर तो यह छड़ी आप ही सम्भाल लो क्योंकि कोई भी चीज आपके साथ नहीं जानी है और इन्हीं सबको प्राप्त करने के लिए आप आजीवन खपते रहे और कितनी दुनिया को आपने मार डाला और कितने ही राज्यों को आप आगे से आगे जीतते चले गए, जबकि तुम्हारे साथ में तो कुछ भी नहीं जाना है। फिर महाराज जी मूर्खों के सरदार तो आप ही हुए न? अतः आप यह मूर्खों के सरदार वाली छड़ी आप ही सम्भालो।

गुरू महाराज जी तो कहते हैं कि यह चुनाव बिल्कुल ही गलत है। अब गुरू जी को पूछो कि महाराज जी! आप भी मुर्खों का निर्णय करते हो?

गुरू जी कहते हैं, हाँ प्रेमीजनो! वास्तविक मूर्ख तो वह है जो नाम सिमरन नहीं करता है क्योंकि -

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥
अंग - 81

इतना कीमती नाम यदि अन्तिम समय में ले लिया जाए-

अंति कालि नाराइणु सिमरै अैसी चिंता महि जे मरै ॥
बदति तिलोचनु ते नर मुकता पीतंबरु वा के रिदै बसै॥
अंग - 526

इस प्रकार के नाम को यदि जप लिया जाए भले ही वह अन्तिम समय ही क्यों न हो, वह व्यक्ति सीधा परमात्मा के द्वार पर ही पहुँच जाता है। दूसरी तरफ जो व्यक्ति नाम की महिमा पर ही विश्वास नहीं करता है, उसे हम शिरोमणि मूर्ख कहते हैं।

धारना - मूरखाँ सिर मूरख है,
जे मंने नाही नाउं।

महाराज जी कहते हैं कि जो यह मानता ही नहीं है कि मेरे अन्दर नाम की शक्ति है, नाम शक्ति से ही मैं पैदा हुआ हूँ, नाम शक्ति में ही मैं रहता हूँ और नाम मेरे अन्दर ही है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ अंग - 293

प्रेमीजनो! जो लोग इस नाम पर अपना विश्वास नहीं स्थापित करते हैं वे तो शिरोमणि मूर्ख हैं। आम व्यक्ति के मन में सवाल आता है कि महाराज जी! क्या पढ़े लिखे लोग, विद्वानजन पण्डित लोग, शास्त्रज्ञ, वेदों के ज्ञाता, बड़ी-बड़ी पुस्तकों के लेखक आदि भी इसी सूची में आ जाते हैं? महाराज जी कहते हैं कि यहाँ पर एक रियायत है जो पढ़ने लिखने के बाद, नाम की महिमा को समझ गया और उसने तत्व की बात को जान लिया, उसकी बात तो हम नहीं करते हैं। जो पढ़े लिखे लोग हैं, जिन्होंने अपनी बुद्धि को तेज कर लिया है, उसमें जो बुद्धि के निम्न तल पर ही विराजमान हैं वे भी उतने ही तेज हो जाते हैं, वे भी उसी प्रकार से बुद्धि का प्रयोग करते हैं। गुरू जी इस प्रकार के लोगों के बारे में कहते हैं -

पड़िआ मूरखु आखीअै जिसु लबु लोभु अहंकारा ॥
अंग - 140

जिसने पाँचों चोरों से छुटकारा नहीं पाया है, जो लोभ, मोह, अहंकार व अभिमान में पड़ा हुआ है उसे तो तुम लोग पढ़ा लिखा कहो ही नहीं क्योंकि पढ़े-लिखे होने का लाभ तभी है, जब हम इन जज्बों के प्रभाव से बच जाएं और सही व तत्व वस्तु को पकड़ लें। अतः महाराज जी कहते हैं कि पढ़ा लिखा तो केवल वही है -

नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना
जिसु राम नामु गलि हारु ॥ अंग - 938

जिसके अन्दर को श्वास जाते समय भी वाहिगुरू है और बाहर को श्वास जाते समय भी वाहिगुरू है। गुरू जी तो केवल उसी को पढ़ा लिखा कहते हैं। अन्य लोग पढ़े-लिखे कैसे हो सकते हैं? उन्होंने तो केवल पुस्तकें मात्र पढ़ी ही हैं न कि उसे जाना है -

पड़िअै नाही भेदु बुझिअै पावणा ॥ अंग - 148

जो तत्व की बात को जान लेता है और उस पर अमल करता है, वहीं वास्तव में पढ़ा लिखा व्यक्ति है। अतः महाराज जी कहते हैं -

हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ॥
अंग - 726

ऐ मूर्ख और अज्ञानी व्यक्ति! तुम परमात्मा का गुणगान नहीं करते हो, प्रभु जी की बन्दगी नहीं करते हो, गुरसिक्खी को धारण करके उसके अनुसार अपने जीवन को ढालते नहीं हो, तुम फिर किस प्रकार के पढ़े लिखे हो? क्योंकि पढ़ा-लिखा या सयाना या गुरसिक्ख तो वही है जो कि -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥

उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ *अंग - 305*

स्नानादि के बाद जो अपने मन को गुरवाणी के अमृत सरोवर में स्नान करवाता है -

उपदेसि गुरु हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥ *अंग - 306*

जब गुरू का मन प्रसन्न हो गया तो फिर गुरू ब्रह्म तथा जीव की एकता का उपदेश देता है -

जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरु उपदेसु सुणावै ॥ *अंग - 306*

उसके ऊपर कृपा करनी है उसका जीव भाव तोड़कर उसे ब्रह्म भाव में प्रवेश करवा देना है। इस प्रकार का जो सिक्ख है वह स्वयं भी नाम जपता है और दूसरों को भी जपाता है। उसकी पदवी फिर कितनी बड़ी होती है -

जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ *अंग - 306*

अतः गुरू जी ने कहा, प्रेमीजनो! पढ़ा-लिखा तो वह है जिसने तत्व की बात को समझ लिया है।

इसका कारण यह है कि उसने संसार से जाना मान लिया है। गुरू जी कहते हैं प्रेमीजनो! तुम अफसोस न करो। जो समय बीत गया तो बीत गया -

फरीदा काली धउली साहिबु सदा है जे को चिति करे॥
आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ ॥
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥
अंग - 1378

उम्र का कोई हिसाब नहीं है, जब भी हम लग जाएँ तो कल्याण अवश्यम्भावी है। गुरू जी कहते हैं कि तुम अभी इसी समय लग जाओ -

अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ॥
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ॥
अंग - 726

अतः सारा कारण उस बात को न समझने का है। दूसरी तरफ जो पढ़े-लिखे लोग हैं, वे कहते हैं कि यदि प्रत्येक समय हम मृत्यु को ही याद रखेंगे तो फिर हम तरक्की कैसे कर सकेंगे? व्यक्ति के हाथ में तो कुछ है ही नहीं। यह तो वैसे ही फँस रहा है कि मैं करता हूँ, मैं करता हूँ। महाराज जी कहते हैं -

जब इह जानै मै किछु करता ॥
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥ *अंग - 278*

महाराज जी कहते हैं कि यह सारा कुछ तो हुआ ही पड़ा है और सब कुछ परमात्मा के हुक्म से ही चल रहा है -

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
अंग - 1

उसी का हुक्म चहुँओर व्याप्त है। हुक्म के द्वारा ही ऊँचे व नीचे हो रहे हैं। हुक्म के द्वारा है सुख और दुख उत्पन्न हो रहे हैं। तुम्हें हुक्म को बूझना चाहिए, यदि तुम हुक्म को बूझ लोगे तो फिर कर्म तुम्हें पकड़ नहीं सकता है। जब तक तुम हुक्म को नहीं बूझते और नहीं मानते हो तथा सदैव ही कहते हो कि मैं करता हूँ, मैं करता हूँ, तब तक तुम बुरे कार्यों के लिए कह दोगे कि परमात्मा करता है और अच्छे कार्यों के लिए कह दोगे कि मैं करता हूँ। गुरू जी कहते हैं कि जब तक तुम्हारे अन्दर यह भावना तब तक सत्य की जो अवस्था है, वह तुम्हारे अन्दर जागृत नहीं हो सकती है। वैसे तुम्हारे पास है क्या -

इस का बलु नाही इसु हाथ ॥
करन करावन सरब को नाथ ॥ *अंग - 277*

वह अन्य कार्य तो करता रहता है लेकिन नाम जपने के समय कहेगा कि यदि वाहिगुरू जपाएगा तो जपेंगे। खाना खाने के समय कभी नहीं कहता है कि जब खिलाएगा तो खा लेंगे। वह तो कहता है कि मैं खाता हूँ, मैं करता हूँ। अतः साधु संगत जी! यह हम लोगों के अन्दर दोष है।

इस प्रकार से महाराज जी फुरमान करते हैं कि प्रेमीजनो! जीवन का कोई भरोसा नहीं है और न भरोसा होने के कारण जल्दी करो, जल्दी करो। शीघ्रातिशीघ्र इस मार्ग पर लग जाओ और दो कार्य करो। एक तो सेवा करो और दूसरा सिमरन करो। नाम जपने से दुखों का नाश होता है और सेवा करने से इस संसार में भी सम्मान मिलता है और जब दुनिया से जाएँगे तो -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥
ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥
कहु नानक बाह लुडाईऐ ॥ *अंग - 26*

'चलता'

नानक लेखै इक गल ...

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकें, चित्त वृत्तियों को एकाग्र करें तथा अपनी रसना की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'। गुरू महाराज जी की अपार कृपा है और दोआबे के सारे क्षेत्र के अच्छे भाग्यों की निशानी है कि महीनावार सत्संग हम सबको प्राप्त होता है। बाबा गुरपाल सिंह जी, जो कि महापुरुषों द्वारा लगाई गई ड्यूटी को निभा रहे हैं, प्रत्येक माह यहाँ पर संगत को निहाल करते हैं।

नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ॥
अंग - 467

सबके बीच एक ही बात लेखे में है और वह है -

एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल ॥1॥
अंग - 261

जितने भी वेद पुराण हैं, इनके अन्दर जो शुद्ध अक्षर है यदि हम उनकी विचार करें तो 'नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख।।' सुखमनी साहिब जी की वाणी के अन्दर फुरमान है -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ ***अंग - 262***

सिमरन होता है कि हम 'उसकी' याद में बैठ कर सिमरन करें। सिमरन के द्वारा सुख की प्राप्ति होती है।

अतः यदि सुख कहीं है तो वह सतगुरू जी की चरण-शरण में ही है -

जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह ॥
अंग - 1427

संसार की दशा जो है वह 'नाम' के अभाव में दुखी हो रहा है। सारी गुरवाणी हमें नाम के साथ जोड़ती है और नाम हमारे अन्दर है। यह कहीं बाहर से नहीं मिलता है। बाहर तो नाम कहीं है नहीं -

बाहरि ढूढन ते छूटि परे
गुरि घर ही माहि दिखाइआ था ॥ ***अंग - 1002***

सतगुरू जी की निशानी भी बतलाई गई है कि सतगुरू वह है जो इस शरीर रूपी घर के अन्दर हमारे असली घर को दिखला दे -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
अंग - 1291

दरअस्ल गुरू कभी भी शरीर नहीं हुआ करता है। शरीर तो एक माध्यम है जिसके द्वारा सतगुरू जी के वचन आ रहे हैं, गुरवाणी आ रही है -

सतिगुर बचन बचन है सतिगुर
पाधरु मुकति जनावैगो॥ ***अंग - 1309***

ये जो गुरू के वचन हैं चाहे आप किसी भी वचन को कमा लो, वही पार लगा देता है -

संतहु सागरु पारि उतरीऐ ॥ ***अंग - 747***

हमने जो पार होना है, वह गुरू जी की कृपा के द्वारा होना है और वचनों का पालन करके होना है। एक वचन को कमाकर भी हम पार हो सकते हैं और जो वह एक वचन है वह है 'वाहिगुरू गुरूमन्त्र'। यहाँ पर आकर ही सारी बात समाप्त होनी है क्योंकि जब परमात्मा मन में बस गया तो फिर तो वह निहाल हो ही जाएगा, पार हो ही जाएगा। परमात्मा को अपने मन में बसाने के लिए ही हम गुरू से मन्त्र लेते हैं। गुरू घर में पाँच प्यारे इस 'गुरूमन्त्र' को प्रदान करते हैं, जिसकी कमाई करके हमने परमात्मा के नाम तक पहुँचना है। कमाई कैसे करनी है, इसकी युक्ति वे लोग बताते हैं जिन्होंने यह कमाई की होती है। जब हम कमाई करके 'नाम' तक पहुँच जाते हैं, तो फिर हमारे सारे दुख व रोग दूर हो जाते हैं।

रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुष जब सत्संग किया करते थे तो उस समय उनके पास बहुत प्यार वाली संगत आया करती थी और उन्हीं की जिज्ञासा की पूर्ति के लिए आप नाम जपने की युक्तियाँ बतलाया करते थे क्योंकि सत्संग में केवल नाम की ही बात होती है -

सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥
जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ ***अंग - 72***

आप इसकी व्याख्या करते हैं। व्याख्या जो है, यह

मूलमन्त्र की ही, फिर जपुजी साहिब की है और उसके बाद सारे गुरू ग्रन्थ साहिब की वाणी की व्याख्या है तथा सारी गुरवाणी नाम के साथ जोड़ती है। सुखमनी साहिब का फुरमान है कि उसकी याद में बैठो जिससे सुख की प्राप्ति होगी क्योंकि सुख तो उसकी याद में बैठने पर, नाम में स्थित होने पर ही प्राप्त हो पाएगा। नाम की निशानी भी गुरू ने बतलाई है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥
देही महि इस का बिस्रामु ॥
सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥
कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ *अंग - 293*

नव निधी अठारह सिधी
पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ ॥
अंग - 649

उस नाम को हम लोगों ने बैखरी वाणी में बोला है और मध्यमा, पसन्ती तथा परावाणी की अवस्थाएँ अन्दर की अवस्थाएँ हैं। इन सब अवस्थाओं के बारे में महापुरुष बतला देते हैं क्योंकि -

अनहद बाणी पूंजी ॥ संतन हथि राखी कूंजी ॥ 2 ॥
अंग - 894

संतन मो कउ पूंजी सउपी
तउ उतरिआ मन का धोखा ॥
धरम राइ अब कहा करैगो
जउ फाटिओ सगलो लेखा॥3॥
महा अनंद भए सुखु पाइआ संतन कै परसादे ॥
कहु नानक हरि सिउ मनु मानिआ
रंगि रते बिसमादे ॥ *अंग - 614*

नाम की जो पूँजी है, वह है तो हमारे अन्दर लेकिन इसकी चाभी सन्तजनों के पास है। महापुरुष इस अमूल्य नाम की चाभी दे देते हैं -

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥1॥
अंग - 81

वह देख लेता है कि यह जिज्ञासु चाभी प्राप्त करने के योग्य हो गया है, इसने कर्म व उपासना की मंजिलों को पार करके ज्ञानावस्था में प्रवेश ले लिया है, इसलिए उसे विज्ञान की अवस्था तक पहुँचाने के लिए महापुरुष उस पर कृपा कर देते हैं। रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुष, उनकी संगत आप सबने की है, वे तो इतने दयालु व कृपालु थे कि उन्होंने कुछ भी छिपा कर नहीं रखा अन्यथा साधू-महात्मा तो रहस्यात्मक बातों को बतलाते ही नहीं हैं लेकिन आप इतने दयावान थे कि उन्होंने भण्डार ही खोल दिए -

पीउ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥
ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥ 1 ॥ *अंग - 186*

असीम भण्डार उन्होंने खोला। सतवां गुरमति समागम था। वहाँ पर आपने सिमरन का अभ्यास, श्वासों के माध्यम से करवाया। बहुत सारे स्वामीजन, बड़े-बड़े महामण्डलेश्वर, तत्व वेत्ते, महान आत्माएँ व साधू-सन्त वहाँ पर पहुँचे हुए थे, वे कहने लगे, महापुरुषो! कोई भी महात्मा बताता ही नहीं है, आपने तो सारा भण्डारा ही खोल दिया और यदि २सारा भण्डारा ही खोल दिया जाए तो फिर अपने पास कुछ नहीं रहता है। महापुरुष कहने लगे -

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा ॥ *अंग - 827*

जब मैं कुछ हूँ ही नहीं तो फिर सब कुछ उसी का तो है -

कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो किछु है सो तेरा॥
तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा ॥
अंग - 1375

दरअस्ल उन्होंने सारी अवस्थाएँ बड़े महापुरुषों सन्त बाबा ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वालों से प्राप्त कीं और भण्डारे खोल दिए। आत्म मार्ग पढ़ लो, पुस्तकें पढ़ लो, उन्होंने सारी भेद की बातें बताई हैं, यदि आप उन्हें पढ़ लो तो फिर और कुछ पढ़ने की जरूरत ही नहीं रह जाती है। महापुरुष कहा करते थे कि मेरे शरीर के बाद तुम लोग तलाश करने जाओगे कि कोई साधू मिल जाए लेकिन वास्तविक साधू का मिल पाना बहुत मुश्किल है। इसलिए यदि तुम लोग वचनों का पालन कर लो तो फिर उन वचनों के द्वारा ही तुम पार हो जाओगे -

संतहु सागरु पारि उतरीऐ ॥
जे को बचनु कमावै संतन का
सो गुर परसादी तरीऐ ॥1॥ *अंग - 747*

वहाँ पर उन्होंने वचन क्या किया? उन्होंने अवस्थाएँ देख कर कि इन्हें बीस-बीस वर्ष सत्संग करते हो चुके हैं, कर्म व उपासना में से अब इन्हें ज्ञानावस्था में पहुँचना चाहिए तो उस समय आपने यह उपदेश किया -

सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥
मन अंतर की उतरै चिंद ॥ *अंग - 295*

महापुरुषों का यह कमाया हुआ उपदेश मंजिल-दर-मंजिल कर्म व उपासना में से निकल कर गया। उस समय आप उपदेश करते हैं, वैसे तो यह गुरवाणी का ही उपदेश है कि-

भागठड़े हरि संत तुम्हारे जिन् घरि धनु हरि नामा ॥
परवाणु गणी सेई इह आए सफल तिना के कामा॥1॥
मेरे राम हरि जन कै हउ बलि जाई ॥
केसा का करि चवरु ढुलावा चरण धूड़ि मुखि लाई ॥
1॥ रहाउ ॥
जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए ॥
जीअ दानु दे भगती लाईन
हरि सिउ लैनि मिलाए ॥2॥ *अंग - 749*

वह जीवन दान, जिसे कि नाम दान भी कहा जाता है, सन्तजनों के बिना अन्य कोई भी दे नहीं सकता है। आम लोग कहते हैं कि चलो 'नाम' लेकर आएँ, अमुक जगह से नाम ले आओ। लेकिन इस प्रकार से नाम नहीं मिलता है क्योंकि नाम तो हमारे अन्दर है और जहाँ तक पहुँचने में सन्तजन हमारी मदद करते हैं क्योंकि वे नाम में अभेद होते हैं। यथा -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥
नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ *अंग - 293*

वे बतला देते हैं -

नाम की महिमा संत रिद् वसै ॥
संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥
संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥
संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥
नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ 8 ॥ 2 ॥
अंग - 265

नाम में अभेद महापुरुष हम सबको भी नाम के साथ ही जोड़ते हैं -

जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥'
सचा अमरु साची पातिसाही सचे सेती राते ॥
सचा सुखु सची वडिआई जिस के से तिनि जाते ॥3॥
पखा फेरी पाणी ढोवा हरि जन कै पीसणु पीसि कमावा॥ नानक की प्रभ पासि बेनंती तेरे जन देखणु पावा ॥4॥ *अंग - 749*

ऐसे दयावान व कृपावान महापुरुष नाम सिमरन की युक्तियाँ बतलाकर इस जीव को उसी परमात्मा के साथ पुनः मिला देते हैं, जहाँ से कि वह बिछुड़ा हुआ है। वे उपदेश दृढ़ करवा देते हैं -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥
उपदेसि गुरु हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरु उपदेसु सुणावै ॥
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ 2 ॥
अंग - 305

महापुरुष दया करके उस उपदेश को करते हैं वे अपने सामने बैठा कर जीव और ब्रह्म की दूरी को मिटा देते हैं।

आप उन गुरमति समागमों के दौरान प्रोफेसरों और दार्शनिकों को बोलने के लिए विषय दिया करते थे। आपने एक विद्वान को यह विषय दे दिया कि वह उपदेश कौन सा है जो जीव तथा ब्रह्म को मिला देता है? एक भी प्रोफेसर उस पर बोल नहीं सका। क्योंकि -

गिआनु न गलीं ढूढीऐ कथना करड़ा सारु ॥
अंग - 469

दूसरी तरफ सन्तजन सहज रूप में ही -

संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥ *अंग - 293*

अन्दर दिखला देते हैं फिर वही नाम कितना प्यारा लगता है -

नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ *अंग - 293*

अन्यथा आँखों के द्वारा देखते हुए और कानों के द्वारा सुनते हुए हम क्या देखते हैं -

अंम्रितु कउरा बिखिआ मीठी ॥
साकत की बिधि नैनहु डीठी ॥ *अंग - 892*

जो विष रूप है, वह तो हमें मीठी लगती है और जो अमृत रूप नाम है, वह हमें कड़ुआ लगता है। हम सबको माया की जहर चढ़ी हुई है, वे सत्संग में आकर -

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ॥ *अंग - 289*

जो हउमै है, वह परमात्मा को देखने नहीं देती है जबकि वास्तव में परमात्मा कण-कण में व्याप्त है। महापुरुष युक्ति बतला देते हैं कि इस प्रकार से आप कर लो। बैखरी बोल कर, मध्यमा, पसन्ती और परा वाणी में। जब यह अभ्यास बढ़ता जाता है तो फिर अन्दर सुनने लगता है और शनैः शनैः कण-कण में व्याप्त परमात्मा दिखाई देने लग पड़ता है। अतः गुरू जी हउमै का उपचार बतलाते हैं जो कि परमात्मा को

देखने नहीं देती है -

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ॥
भाँभीरी के पात परदो बिनु पेखे दूराइओ ॥ 3 ॥
अंग - 624

वास्तव में तो परमात्मा हमारे अन्दर विद्यमान है लेकिन हउमै का परदा हमें देखने नहीं देता है -

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥
अंग - 466

हउ हउ मै मै विचहु खोवै ॥
दूजा मेटै एको होवै ॥ अंग - 943

हउमै दीरघ रोगु है.....॥ अंग - 466

यह बहुत बड़ा रोग है लेकिन दवाई भी इसके अन्दर है -

दारु भी इसु माहि ॥ अंग - 466

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥ अंग - 259

दवाई तो हमारे अन्दर ही विद्यमान है, लेकिन प्रश्न उत्पन्न होता है कि हमें इसका पता नहीं चल पाता है? इसका कारण यह है कि जब तक हम गुरू वाले नहीं बनते हैं, सत्संग नहीं करते हैं, अन्तरंग साधन नहीं करते हैं, तब तक हमें पता नहीं चल पाता है। गुरू क्या बतलाता है? संयम, यह मानसिक नियम है, शारीरिक नियम नहीं है। गुणों को धारण करना पड़ेगा क्योंकि -

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ अंग - 4

आसन करो, मन की साधना करो, उसके बाद होता है - प्राणायाम। प्राणायाम के बाद होता है - प्रत्याहार। मन तो बुराइयों की तरफ दौड़-दौड़ कर जाना चाहता है जैसे कि अभी कुछ समय पहले यह शबद पढ़ा जा रहा था -

मनु लोचै बुरिआईआ गुर सबदी इह मन होड़ीअै।

मन को रोको क्योंकि मन का तो यह स्वभाव ही है कि वह दौड़-दौड़ कर कहीं का कहीं चला जाता है -

कहै कबीरु सुनहु रे संतहु
इहु मनु उडन पंखेरु बन का ॥ अंग - 1253

यह तो क्षण भर में ही न जाने कहाँ से कहाँ निकल जाता है, इसीलिए कहा गया है कि मन जैसा कोई मित्र भी नहीं है और इसके सदृश्य कोई दुश्मन भी नहीं है। यदि कोई मन को जीत ले तो समझ लो कि उसने सारा संसार ही जीत लिया है। यथा -

ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा
मन सा मिलिआ न कोइ ॥ 32 ॥ अंग - 342

वह दवाई इसके अन्दर ही पड़ी हुई है -

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥
गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥
नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥ अंग - 259

श्वास-श्वास सिमरन की अवस्था, कितनी बड़ी अवस्था है -

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामाँ मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ 1 ॥
अंग - 319

जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ॥ अंग - 306

महापुरुषों ने इसे व्यवहारिक रूप में करके दिखलाया जिसे कि हमें हमेशा करना चाहिए और कम से कम ब्रह्मवेला में तो इसका अभ्यास अवश्य ही करना चाहिए। यथा -

उठत बैठत सोवत नाम ॥
कहु नानक जन कै सद काम ॥ अंग - 286

यह सत्संग है। सत्संग में भी हम लोग महापुरुषों के उपदेश को बार-बार दोहराते हैं। जब हम बार-बार दोहराते हैं तो फिर -

बारं बार बार प्रभु जपीअै ॥
पी अंम्रितु इहु मनु तनु धपीअै ॥ अंग - 286

हमें श्वास-श्वास वाहिगुरू का जप करना चाहिए। महापुरुषों ने हमें यह एक सबक दे दिया है। इस पर अमल करना अब हमारा कर्तव्य है -

कहत कबीरु जीति कै हारि ॥ अंग - 1159

चाहे बाजी को जीत लो अथवा हार लो, यह तुम्हारे वश की बात है। महापुरुषों ने तो -

बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि ॥ 5 ॥ 1 ॥ 9 ॥
अंग - 1159

महापुरुषों ने बहुत सारी पुस्तकें लिखी हैं। इन सभी में केवल नाम की ही व्याख्या है। अब हम लोगों को यह पता ही नहीं लगता है कि उस अवस्था तक कैसे पहुँचना है?

(शेष पृष्ठ 40 पर)

नूरानी मिलाप - 9

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

(श्री गुरू नानक देव जी महाराज जी के 2019 में 550 वर्षीय प्रकाश शताब्दी को समर्पित)

मै मूरख की केतक बात है कोटि पराधी तरिआ रे॥
गुरु नानकु जिन सुणिआ पेखिआ से फिरि गरभासि न परिआ रे ॥

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 45)

भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि ॥
अंग - 1279

समय अपनी गति से चलता रहा। अगम्य रंग में रंगे हुए सतगुरू जी का प्रत्येक पल 'बात अगम्य की' हो जाता है। वास्तव में वे अन्धकारयुक्त गुफाओं में प्रकाश भरने के लिए आए थे। सूर्य के प्रकाश ने बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक को प्रकाश देना ही है, यही उसकी विलक्षणता व बड़प्पन है। समय के अन्तराल के साथ सतगुरू जी और भी अधिक गहन गम्भीर होते चले गए। धोड़ा खाना, थोड़ा सोना तथा एकान्त में रहना, आप जी की नित्य प्रतिदिन की दिनचर्या बन गई थी। आप लगातार घंटों तक परमात्मा के नाम में लीन रहते। पूर्ण युवावस्था और वैराग्य? इन दोनों का सुमेल कैसे? यह प्रश्न पिता जी के मन में प्रत्येक समय बना रहता था। आप हमेशा सोचते रहते कि इसका क्या कारण है? कोई भूत प्रेतादि का साया तो नहीं है? या फिर कोई शारीरिक तत्व की न्यूनता अथवा अधिकता तो नहीं है? इस प्रकार के प्रश्नों का मन में आते रहने से पिता जी का परेशान होना स्वाभाविक ही था। उपयुक्त समाधान ढूंढ़ने के लिए पिता जी ने कोशिशें शुरू कर दीं, सबसे पहले आप जी ने गाँव के प्रसिद्ध वैद्य हरिदास जी को बुलाया। दरअस्ल असली बात तो यह है कि परमात्मा के प्रेम में रंगी हुई रूहों को आम मनुष्य रोगग्रस्त समझता है जबकि वास्तविकता यह है कि सारा संसार तो स्वयं रोगग्रस्त है और यही नहीं अपितु महारोगी है। दूसरी तरफ जो लोग परमात्मा के रंग में रंगे हुए होते हैं, वे संसार को एक नहीं बल्कि अनेकों रोगों से छुटकारा दिलवाने वाले होते हैं। वे तो तमाम दुखों को समाप्त करके सारे संसार को लोक व परलोक के समस्त सुखों को प्रदान करने की ताकत रखते हैं। पिता मेहता कल्याणदास जी के बुलाने पर वैद्य जी पहुँच जाते हैं। सतगुरू जी चद्दर को ओढ़कर चारपाई पर लेटे हुए हैं। वैद्य जी उनके पास में आकर चारपाई पर बैठ गए और उन्होंने गुरुदेव की बाँह को पकड़ कर नब्ज देखनी शुरू कर दी। सतगुरू जी ने वैद्य पर अपनी दृष्टि डाली और फुरमान किया -

वैदु बुलाइआ वैदगी पकड़ि ढंढोले बाँह ॥
भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि ॥
अंग - 1279

वैद्य ने जब इलाही नूर के दर्शन किए, उनके नेत्रों की तरफ देखा कि नेत्रों के अन्दर दिव्याकर्षण है, जीवन को बदल देने की चमक है, तो फिर वैद्य जी श्रद्धा में आ गए। वैद्य जी ने इन्हें नमस्कार की, उनका भाग्योदय हो गया और वे निहाल हो गए, सतगुरू जी ने फुरमाया कि आप नब्ज में से क्या देखते हो?

वैद्य जी - जी मैं पित्त, कफ और वात का सन्तुलन देखता हूँ क्योंकि इन तीनों के असन्तुलन से शरीर के अन्दर विगाड़ का होना स्वाभाविक ही है। इसे सन्तुलन में लाने के लिए मैं जड़ी बूटियाँ दूँगा। फलस्वरूप आप स्वस्थ हो जाओगे। वैद्य जी की चिकित्सा पद्धति की बात को सुनकर गुरू जी ने फुरमान किया कि वैद्य जी! यह तो सारा संसार ही रोगी है जैसे कि गुरवाणी का फुरमान है -

संसारु रोगी नामु दारु मैलु लागै सच बिना ॥
अंग - 687

जो जो दीसै सो सो रोगी ॥
रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ अंग - 1140

जनम जनम के दूख निवारै सूका मनु साधारै ॥
दरसनु भेटत होत निहाला हरि का नामु बीचारै ॥1॥
मेरा बैदु गुरु गोविंदा ॥
हरि हरि नामु अउखधु मुखि देवै काटै जम की फंधा॥
अंग - 618

परमात्मा के नाम को भूलकर सर्वत्र दुख ही दुख है और

एकाध नहीं बल्कि अनेकों रोग इस मनुष्य को लगे हुए हैं। कोई मन के धरातल पर रोगी है जबकि कोई शरीर के धरातल पर रोगी है। वैद्य जी! सारे ही रोग तो वास्तव में मन से ही शुरू होते हैं। जिसका मन निरोग है, उसका शरीर भी निरोग ही रहेगा। आप शरीर का उपचार तो कर सकते हो लेकिन मन के रोगों का उपचार क्या है? मन को आज से नहीं बल्कि जन्म-जन्मान्तरों से रोग लगे हुए हैं। सांसारिक दवा-दारु, हमें इन रोगों से निजात नहीं दिलवा सकती है क्योंकि इनका उपचार तो समर्थ सतगुरू के पास है जो कि नाम रूपी दवाई देकर उसे जन्म-जन्मान्तरों के रोगों से मुक्त कर देते हैं -

जितु दारु रोग उठिअहि तनि सुखु वसै आइ ॥
रोगु गवाईओ आपणा त नानक वैदु सदाइ ॥
अंग - 1279

वैद्य जी इस बात को सुनने के बाद हाथ जोड़कर गुरू जी के चरणों में बैठ गए। वैद्य जी हैरान थे कि मैं तो आज तक मानसिक रोगों से अनजान ही रहा। इस हैरानीजनक मुद्रा में वैद्य अभी अपने मन के रोगों के बारे में सोच ही रहा था कि गुरू जी ने और भी कृपा करते हुए कहा वैद्य जी! मन का सबसे खतरनाक रोग है - 'हउमै'। जब तक हउमै का नाश नहीं होता है, तब तक जीव का छुटकारा नहीं होता है। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सारे रोग हैं। पाँच भ्रम, पाँच विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) आशा, तृष्णा रूपी डायनें, पाँच विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस व गन्ध) आदि अनेकों दोष इसके अन्दर पड़े हुए हैं। क्या इन सबका इलाज आपके पास है?

अपने अन्दर को टटोलते हुए वैद्य जी अत्यन्त नम्रता में आ गए और आपने अपने मानसिक स्वास्थ्य के लिए विनती की कि हे सतगुरू जी। आप मेरे ऊपर कृपा करो ताकि मुझे भी जो रोग जन्म जन्मान्तरों से लगे हुए हैं, वे दूर हो सकें। कृपावान सतगुरू जी ने कृपा की और कहा वैद्य जी! सत्संग किया करो तथा परमात्मा के नाम के साथ जुड़ा करो। यह नाम ही हउमै के रोग को तथा अन्य सभी रोगों को दूर करने में समर्थ है। अन्य लोगों को दवा देने वाला वैद्य आज स्वयं ही मरीज बन गया है यानि कि वह स्वयं को रोग ग्रस्त महसूस कर रहा है और वह नाम रूपी दवाई को प्राप्त करके निहाल हो गया है, जैसा कि गुरवाणी का फुरमान है -

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥
गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥
गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥
नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥ अंग - 259

वैद्य जी को तमाम जीवों के रोगों में ग्रसे होने के बारे में ज्ञान प्राप्त हुआ और वह अपनी तन्दरुस्ती की दवाई लेकर तथा निहाल होकर वापिस लौटे। यह करामात थी एक नूरानी व रूहानी मुलाकात की।

(पृष्ठ 38 का शेष)

महापुरुषों ने उस अवस्था के बारे में इस प्रकार से बताया है कि सबसे पहले सीधे बैठ जाओ।

बैसे तो आजकल हमारी जीवन शैली ही इस प्रकार की हो गई है जिसने कि हमारी शरीर प्रणाली को ही बिगाड़ डाला है। हमारे खून में शुगर बहुत बढ़ गई है। एक खोज के अनुसार चीनी जो है, यह एक प्रकार का सफेद जहर है। इसलिए चीनी की अपेक्षा गुड़ का प्रयोग करें। यदि भोजन करने के बाद थोड़ा सा गुड़ खा लिया जाए तो फिर सारा खाया-पिया हज्म हो जाता है। दूसरी तरफ यदि हम रसगुल्ले या आइसक्रीम आदि के माध्यम से चीनी का सेवन करते हैं तो वह हमारी पाचन प्रणाली पर बहुत ही बुरा प्रभाव डालती है तथा किसी भी चीज को ढंग से हज्म नहीं होने देती है। चीनी हमारे शरीर में अम्ल तत्वों को बढ़ा देती है, अतः इन बातों का भी हमें ख्याल रखना चाहिए।

महापुरुषों ने हमें नाम वाणी की युक्ति बतलाई व हमें अपनाने की ताकीद की -

परमेसरि दिता बंना ॥ दुख रोग का डेरा भंना ॥
अंग - 627

'बना' कहते हैं कि रोक लग गई यानि कि वहीं पर रुक गया। अब कितने बड़े-बड़े कैंसर जैसे रोग ठीक हो गए। हम लोगों को भी इस युक्ति को अपनाना चाहिए। सुखमनी साहिब की वाणी की पहली अष्टपदी में ही जो वचन आए हैं, उन्हीं को कमा लो -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥ अंग - 262

यदि इतना सा ही कमा लो तो गुरू जी कथन करते हैं कि उसी से तुम्हें सारे सुख भी प्राप्त हो जाएंगे और वह मुक्तावस्था भी प्राप्त हो जाएगी कि जिसे प्राप्त करने के बाद सारे दुख ही समाप्त हो जाते हैं -

आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥
नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥ अंग - 295

वाहिगुरु जी का खालसा
वाहिगुरु जी की फतहि।

श्री गुरू नानक देव जी के 2019 में 550 वर्षीय मनाए जा रहे प्रकाश पर्व को समर्पित गुरू नानक वाणी पर आधारित श्रृंखलाबद्ध लेख
श्री गुरू नानक देव जी की प्रमुख रचना 'आसा दी वार' में 'मानव संकट की चेतना'

डा. जगजीत सिंह

श्री गुरू नानक देव जी की शाहकार रचना आसा दी वार में 'मानव संकट की चेतना'

श्री गुरू नानक देव जी की सारी रचना का श्रोत ब्रह्म अनुभव है जिसका जिक्र उनकी रचना में बार-बार हुआ है। 'आसा दी वार' में 'ब्रह्म सत्य' का जो स्वरूप हमारे सामने आता है वह मूल मन्त्र के '**ੴ** सति' तथा जपुजी के 'आदि सचु जुगादि सचु' की अपेक्षा थोड़ा पृथक है। 'आसा दी वार' का परम सत्य, सृजनात्मक अस्तित्वमयी हस्ती है जो कि -

1. जो कि स्वयं का सृजन करती है
2. अपने नाम की रचना करती है
3. सारी कायनात की रचना करती है
4. जो कि सारी रचना में परिपूर्ण होकर आनन्दित होती है

आपीनै आपु साजिओ (1)
आपीनै रचिओ नाउ (2)
दुयी कुदरति साजीऐ (3)
करि आसणु डिठो चाउ (4)

अर्थात परम हस्ती निराकार व शून्य ब्रह्म नहीं है बल्कि कर्ता पुरुष रूप में जीव व जगत का सृजन, उसका पालन व संहार करता है। परम सत्य का इस प्रकार का संकल्प भारत के सारे मतो-मतान्तरों से विलक्षण है जो कि जैन तथा बुद्ध मत की भांति या तो निरंकार के अस्तित्व में यकीन ही नहीं रखते हैं या फिर न्याय तथा सांख की भांति द्वैतवादी सिद्धान्त पुरुष तथा प्रकृति को परमात्मा की भांति शाश्वत हस्ती मानते हैं। शंकराचार्य का निराकार व अद्वैत ब्रह्म कठोर, निरिच्छत, प्राणहीन, प्रभावहीन व प्रेरणाहीन परमात्मा है जिसकी उपासना या पूजा करने से कोई उत्साह उत्पन्न नहीं होता है। यह निराकार ब्रह्म बहुत ही सुन्दर बौद्धिक कहानी है, जिसकी आधारभूत कल्पना में ही भूल है, उसके अनुसार संसार की रचना एक भ्रम है, छल है, रस्सी का साँप है। इसके लिए त्याग ही जीवन का वास्तविक आदर्श है। इसके विपरीत श्री गुरू नानक देव जी का 'कर्ता पुरुष' प्रकृति का सृजन करने वाला तथा उसे संवारने वाला है (दुई कुदरति साजीऐ) तथा उसमें व्याप्त होकर विभिन्न प्रकार की प्रकृति में आनन्दित होता है (करि आसणु डिठो चाउ)। इस प्रकार की प्रकृति माया या भ्रम नहीं है बल्कि वह अस्तित्व वाली है, सत्य है व धर्मशाला है। इसके खण्ड व ब्रह्मांड, लोक, आकार व अन्य रचनाएँ सभी सत्य हैं -

सचे तेरे खंड सचे ब्रहमंड ॥
सचे तेरे लोअ सचे आकार ॥
सचे तेरे करणे सरब बीचार ॥
सचा तेरा अमरु सचा दीबाणु ॥
सचा तेरा हुकमु सचा फुरमाणु ॥ .....॥

अंग - 463

परमात्मा द्वारा सृजित यह प्रकृति आश्चर्यजनक है। इसकी रंग विरंगी रचनाओं में अनेकों प्रकार की संगीतक मधुर धुनियाँ हैं, बौद्विक ज्ञान हैं, विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु, पवन, पानी व अग्नि की विचित्र लीलाएँ हैं, धरती की करामातें हैं, अंडज, जेरज, सेतज और उत्भुज के माध्यम से नित्य नवीन सृजन हो रहा है। यह सब कुछ आश्चर्यजनक मस्ती वाला है -

विसमादु नाद विसमादु वेद ॥ विसमादु जीअ विसमादु भेद ॥ विसमादु रूप विसमादु रंग ॥ विसमादु नागे फिरहि जंत ॥ विसमादु पउणु विसमादु पाणी ॥ विसमादु अगनी खेडहि विडाणी ॥ विसमादु धरती विसमादु खाणी ॥ विसमादु सादि लगहि पराणी ॥ विसमादु संजोगु

विसमादु विजोगु ॥ विसमादु भुख विसमादु भोगु ॥ विसमादु सिफति विसमादु सालाह ॥ विसमादु उझड़ विसमादु राह ॥ विसमादु नेड़ै विसमादु दूरि ॥ विसमादु देखै हाजरा हजूरि ॥ वेखि विडाणु रहिआ विसमादु ॥ नानक बुझणु पूरै भागि॥ *अंग - 463*

इस संकल्प को गुरू जी ने बार-बार स्पष्ट किया है कि सारी कुदरत का सृजन करने वाला परमात्मा है। परमात्मा को उसकी रचना में से ढूँढ़ा, देखा और अनुभव किया जा सकता है। वह उसकी प्रकृति में से ही दिखाई पड़ता है। सारे पाताल, आकाश, पवन, पानी, आग आदि उसी की रचनाएँ हैं और वह इनमें स्वयं विद्यमान होकर रमा हुआ है और सचेत होकर सबको देख रहा है -

कुदरति दिसै कुदरति सुणीअै कुदरति भउ सुख सारु ॥ कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब आकारु ॥ कुदरति वेद पुराण कतेबा कुदरति सरब वीचारु ॥ कुदरति खाणा पीणा पैन्णु कुदरति सरब पिआरु ॥ कुदरति जाती जिनसी रंगी कुदरति जीअ जहान ॥ कुदरति नेकीआ कुदरति बदीआ कुदरति मानु अभिमानु ॥ कुदरति पउणु पाणी बैसंतरु कुदरति धरती खाकु ॥ सभ तेरी कुदरति तूं कादिरु करता पाकी नाई पाकु ॥ नानक हुकमै अंदरि वेखै वरतै ताको ताकु ॥ *अंग - 464*

श्री गुरू नानक देव जी का जगत सत्य का यह सिद्धान्त तत्कालीन धर्म सिद्धान्तों से पृथक व विलक्षण है। यह सत्य की पहचान का सिद्धान्त है जो सत्य सर्व व्यापक है प्रत्येक जीव के अन्दर विद्यमान है तथा जिसके बारे में समझ का सीधा मार्ग है -

नानक सचु धिआइनि सचु ॥ *अंग - 463*

जपुजी के अन्दर भी श्री गुरू नानक देव जी ने इसी समस्या को मुख्य रूप में प्रकट किया है -

किव सचिआरा होईअै किव कूड़ै तुटै पालि ॥

अंग - 1

इस मूल समस्या का समाधान स्पष्ट शब्दों में हुक्म की पालना है -

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥

अंग - 1

'हुक्म' जो कि मनुष्य के अन्तःकरण में विद्यमान है। 'हुक्म' तथा 'नाम' पर्यायवाची शब्द हैं। 'हुक्म' की समझ 'नाम' की समझ है। 'नाम' सारी रचना का तत्व, सार तथा आधार है। (जेता कीता तेता नाउ) गुरू नानक देव जी का धर्म संकल्प, नाम के द्वारा सत्य का अनुभव है -

भरीअै मति पापा कै संगि ॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि॥

अंग - 4

नाम मार्ग ही सत्य का मार्ग है। सत्य की आराधना करने वाले ही सच्चे मनुष्य हो सकते हैं लेकिन श्री गुरू नानक देव जी के समय धर्म का इस प्रकार का संकल्प पंख लगाकर उड़ चुका था -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि ऊडरिआ ॥ कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ हउ भालि विकुंनी होई ॥ आधेरै राहु न कोई ॥ विचि हउमै करि दुखु रोई ॥ कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥

अंग - 145

तत्कालीन धर्म एक रस्म तक ही सीमित होकर रह गया था जो कि नैतिक तथा अध्यात्मिक दोनों गुणों से रहित था। श्री गुरू नानक देव जी का 'नाम-मार्ग' सच्चे परमात्मा के सच्चे सृजन में नैतिक जीवन के माध्यम से सत्य की पहचान करवाता है। इस मार्ग से भटक कर भारतीय समाज अन्दर और बाहर से खोखला हो चुका था। बर्हिमुखी पक्ष से विदेशी आक्रमणों ने पराधीनता का जीवन दे दिया, स्वाभिमान समाप्त हो गया और भारतीय संस्कृति को तिलांजलि दे दी गई। धार्मिक जीवन केवल पाखण्ड का जीवन बन गया था। 'आसा दी वार' के बहुत से श्लोकों में उस समय की सामाजिक तथा धार्मिक स्थिति का जो यथार्थ चित्र खींचा गया, वह अन्य रचनाओं में कम ही उपलब्ध होता है। धर्म का आदर्श 'सत्य की तलाश' है, सत्य के साथ जोड़ना है, आदर्श मनुष्य तथा आदर्श समाज उत्पन्न करना है। क्या वह भी कोई धर्म हो सकता है जो कि वहमों, भ्रमों, पाखण्डों, धोखेबाजियों, दुराचारियों, जुल्मों, मक्कारियों, फरेबों व कुकर्मों पर पलता है? जब धर्म की शिक्षा देने वाले मुखी ही झूठ बोलने वाले, मानवता का गला घोटने वाले, कातिल तथा घोर अज्ञानी हों, तो फिर जनता का कल्याण कैसे हो सकता है? गुरू जी ने धर्म तथा समाज के तीनों प्रमुख व्यक्तियों यानि कि काजियों, ब्राह्मणों तथा योगियों का विश्लेषण करते हुए कहा है कि-

कादी कूड़ु बोलि मलु खाइ ॥ ब्राहमणु नावै जीआ घाइ॥ जोगी जुगति न जाणै अंधु ॥ तीने ओजाड़े का बंधु ॥ *अंग - 662*

ब्राह्मण, हिन्दू धर्म तथा समाज का मुख्य व्यक्ति था। उसने आन्तरिक सत्य का त्याग करके बाहरी व्यर्थ की 'सुच्चता' या 'शुद्धता' को ही अपना धर्म-कर्म बना रखा था और जाति अभिमान, अहंकार, झूठ, फरेब, लोभ, लालच तथा बाहरी दिखावा उसकी जिन्दगी बन चुकी थी। इसी वर्ग पर समाज को चलाने का उत्तरदायित्व था। हिन्दू समाज एक तरफ तो बाहरी अत्याचारियों, जुल्मों व घृणा का शिकार था, दूसरी तरफ ब्राह्मणवाद के पाखण्डजाल ने उसके जीवन को घोर नर्क बना रखा था। उच्च जातियों के लोग निम्न जातियों को शूद्र, चण्डाल, पशु ढोर आदि कहकर नफरत करते थे तथा उन्हें दुत्कारते थे हालांकि ब्राह्मण और क्षत्रिय स्वयं पाखण्ड का जीवन जी रहे थे। उस समय के भारतीय जीवन में गुरू जी के अनुसार 'सत्य' का अकाल पड़ चुका था तथा चहुँओर झूठ और पाखण्ड का ही वातावरण था -

सचि कालु कूड़ु वरतिआ कलि कालख बेताल ॥

अंग - 468

राजनैतिक हाकिम भारतीय जनता पर न केवल इसलिए जुल्म करते थे कि वे मुसलमान धर्म के धारणी न होकर हिन्दू धर्म के धारणी हैं बल्कि वे इसलिए भी जुल्म करते थे कि आचरण के तौर पर भी निम्न कोटि के मनुष्य हैं। अब इस प्रकार के माहौल में लालची, पापी, झूठे तथा कामुक प्रवृत्ति के अहिलकारों से न्याय की उम्मीद कैसे की जा सकती थी? एक तरफ तो हाकिम श्रेणी का यह हाल है और दूसरी तरफ धर्म तथा समाज के ठेकेदार काजियों, ब्राह्मणों और योगियों का निम्न कोटि का आचरण तथा तीसरी तरफ काजियों और ब्राह्मणों द्वारा पीसी गई जनता, अज्ञानता के घोर अन्धकार में पशुओं या गधों जैसा जीवन जीने के लिए मजबूर है। यह सारा चित्र निम्न श्लोक में व्यक्त हो रहा है -

लबु पापु दुइ राजा महता कूड़ु होआ सिकदारु ॥
कामु नेबु सदि पुछीऐ बहि बहि करे बीचारु ॥
अंधी रयति गिआन विहूणी भाहि भरे मुरदारु ॥
गिआनी नचहि वाजे वावहि रुप करहि सीगारु ॥
ऊचे कूकहि वादा गावहि जोधा का वीचारु ॥
मूरख पंडित हिकमति हुजति संजै करहि पिआरु ॥
धरमी धरमु करहि गावावहि मंगहि मोख दुआरु ॥
जती सदावहि जुगति न जाणहि छडि बहहि घर बारु॥

अंग - 469

इस प्रकार के द्वन्द्व तथा पाखण्ड भरे जीवन का नक्शा 'आसा दी वार' के श्लोकों में विद्यमान है। कुछेक प्रमुख झल्कियाँ अधोलिखित प्रकार से प्रस्तुत की जा रही हैं -

1) **ब्राह्मण** - किसी समय ब्राह्मण, हिन्दू धर्म का सर्वाधिक सम्मानित व्यक्ति था लेकिन गुरू जी के समय ब्राह्मणी तहिजीव, कर्म-धर्म तथा आचरण केवल झूठ की नुमाइश बन चुकी थी। वह सत्य के रास्ते से भटक चुका था और केवल दिखावे और आडम्बर में विलीन हो चुका था। वह दो धोतियां व दो तौलिए अपने पास रखता है, अपने पास धर्म की पुस्तकों को रखता है, बगुले की भांति आँखें बन्द करके लोगों के सामने संध्या भी करता है, मूर्ति को जल भी चढ़ाता है तथा पूजा भी करता है। माथे तथा भुजाओं पर तिलक भी लगाता है। लेकिन वह यह सब कुछ झूठ और फरेब का आडम्बर तथा पैसे बटोरने के लिए ही करता है। इस विधि से वह अपनी आत्मा और परमात्मा दोनों के साथ धोखा करता है। गुरू जी इस पर चोट करते हुए कथन करते हैं कि आन्तरिक शुद्धता और सत्य से विहीन बाह्य भेष केवल पाखण्ड जाल से बढ़कर कुछ भी नहीं है -

पड़ि पुसतक संधिआ बादं ॥
सिल पूजसि बगुल समाधं ॥
मुखि झूठ बिभूखण सारं ॥
त्रैपाल तिहाल बिचारं ॥
गलि माला तिलकु लिलाटं ॥
दुइ धोती बसत्र कपाटं ॥
जे जाणसि ब्रहमं करमं ॥
सभि फोकट निसचऊ करमं ॥
कहु नानक निहचऊ धिआवै ॥
विणु सतिगुर वाट न पावै ॥

अंग - 470

मलिन मन का धारणी ब्राह्मण एक तरफ तो धोती, टिक्का तथा माला के सहारे से बाहरी सुच्चता का पाखण्ड करता है लेकिन छिपे ढंग से मुसलमानों की खुशी लेने के लिए उनकी पुस्तकों को पढ़ता है और उनके अनुसार कार्य करता है। एक तरफ तो वह मुसलमानों को घृणा करते हुए मलेच्छ कहता है जब कि दूसरी तरफ उन मलेच्छ लोगों से धन माँगने में शर्म भी महसूस नहीं करता है। बाहरी तौर पर तो वह सत्य व शुद्धता का प्रचार करता है, लोगों को माँस खाने से रोकता है, माँसाहारियों को राक्षस कहता है लेकिन वह चोरी-छिपे मुसलमानों द्वारा कलमा पढ़कर तैयार किया गया यानि कि हलाल किया गया बकरा, बेशरमी से खा जाता है। ऐसा फरेबी अन्य लोगों को अपने मकड़जाल में फँसाने के लिए अपने चौंके पर गाय के गोबर का लेपन करवाता है, उसके चारों तरफ लकीरें निकालता है और उसके ऊपर स्वयं, जो कि झूठ और फरेब की मूर्ति है, बिराजमान हो

जाता है। वह लोगों को अपने पास आने से यह कहकर रोकता है कि उसका चौका अशुद्ध हो जाएगा और तैयार किया गया अन्न खराब हो जाएगा। झूठ, पाखण्ड व कालिख भरे मन वाला ब्राह्मण, बाहरी सुच्चता को दर्शाने के लिए चुल्लियाँ भरता है -

गऊ बिराहमण कऊ करु लावहु गोबरि तरणु न जाई॥
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछाँ खाई॥
अंतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई ॥
छोडीले पाखंडा ॥ नामि लइअै जाहि तरंदा ॥ 1 ॥
अंग - 471

मथै टिका तेड़ि धोती कखाई ॥ हथि छुरी जगत कासाई ॥ नील वसत्र पहिरि होवहि परवाणु ॥ मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु ॥ अभाखिआ का कुठा बकरा खाणा ॥ चऊके ऊपरि किसै न जाणा ॥ दे कै चऊका कढी कार ॥ ऊपरि आइ बैठे कूड़िआर ॥ मतु भिटै वे मतु भिटै ॥ इहु अंनु असाडा फिटै ॥ तनि फिटै फेड़ करेनि ॥ मनि जूठै चुली भरेनि ॥ कहु नानक सचु धिआईअै॥ सुचि होवै ता सचु पाईअै ॥
अंग - 472

क्या आज का समाज तथा रस्मी धर्म इस गिरावट की तरफ नहीं जा रहा है?

ब्राह्मणवाद का पाखण्ड जाल

1) जाति व वर्ण - ब्राह्मणवाद के कारण जाति अभिमान शिखर पर पहुँच चुका था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र का पारस्परिक मेल-मिलाप तनिक सा भी नहीं था। निम्न जातियों को चण्डाल व अछूत कहकर दुत्कारा जाता था। गुरू जी का कोमल हृदय, निम्न जातियों के लिए हमदर्दी से भर गया तथा गुरू जी ने उन्हें अपना संगी-साथी बनाया-

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिऊ किआ रीस॥
अंग - 15

गुरू जी के अनुसार सम्पूर्ण मानवता का एक ही धर्म है और सारे मनुष्य एक ही अकाल पुरुष की रचना हैं। जातियों का विभाजन अमानवीय है। सबके अन्दर एक ही परमात्मा की ज्योति विद्यमान है -

जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राहमणह ॥ खत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं परा क्रितह ॥ सरब सबदं एक सबदं जे को जाणै भेऊ ॥ नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देऊ ॥ 3 ॥ मः 2॥ एक क्रिसनं सरब देवा देव देवा त आतमा ॥ आतमा बासुदेवसि जे को जाणै भेऊ ॥ नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देऊ ॥ 4 ॥
अंग - 469

परमात्मा की दरगाह में 'जाति' को पूछा नहीं जाएगा बल्कि मनुष्य के कर्म ही उसका साथ निभाएँगे। वास्तविक जाति तो मनुष्य के अच्छे और बुरे कर्म ही हैं -

अगै जाति न जोरु है अगै जीऊ नवे ॥
जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ ॥ अंग - 469

2) स्त्री जाति के साथ बदसलूकी

ब्राह्मणवाद के कारण स्त्री को शूद्र तथा व्यभिचारिणी कहकर उसे अत्यन्त निम्न दर्जा दिया गया। पारम्परिक तौर पर ही नारी की निन्दा की जा रही थी। तुलसी रामायण में लिखा है -

ढोल गंवार सूदर पशू नारी,
पाँचो ताड़ना को अधिकारी।

गुरू जी ने इस परम्परा को तोड़ा। स्त्री को ब्राह्मणवाद के पाखण्ड जाल में से निकाल कर उसे सम्मानित रुतबा प्रदान किया। गुरू जी के अनुसार स्त्री, महापुरुषों की जननी है, वह समाज का महत्वपूर्ण अंग है। वह मुक्ति के मार्ग में रोड़ा नहीं अपितु मुक्ति के मार्ग में सहायक है -

भंडि जंमीअै भंडि निंमीअै भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीअै भंडि होवै बंधानु ॥
सो किऊ मंदा आखीअै जितु जंमहि राजान ॥
अंग - 473

जैन मत में स्त्री मुक्ति की हकदार नहीं है। बौद्ध मत में स्त्री का कोई रुतबा नहीं है। समाज का अंर्द्धांग स्त्री, घृणा व भेदभाव का शिकार थी। सामाजिक चलन का सुधार करने के लिए आवश्यक था कि स्त्री को सम्मानित स्थान प्रदान किया जाए। आज भी दक्षिणी भारत के बहुत सारे मन्दिरों में विशेष आयु की स्त्रियों का जाना वर्जित है। इस प्राचीन परम्परा को तोड़ने के लिए विशाल स्तर पर फसाद हुए हैं।

'चलता'

गुरबाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वाले

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 44)

सिरीरागु महला 3
सुख सागरु हरि नामु है
गुरमुखि पाइआ जाइ॥

हे भाई! सुखों के सागरु = समुद्र हरि नामु = प्रभु जी का नाम है भावार्थ सारा संसार विषय-विकारों, खाने-पीने व धन पदार्थों आदि में से सुख की तलाश करता है, जबकि वास्तव में सुखों का सागर प्रभु जी का नाम है जिसे कि गुरुमुखों की संगत करके ही पाइआ = प्राप्त किया जा सकता है -

अन दिनु नामु धिआईऐ
सहजे नामि समाइ॥

जो अनदिनु = प्रतिदिन या दिन-रात परमात्मा का नाम धिआईऐ = जपते हैं वे सहज = स्वाभाविक रूप से ही वाहिगुरू जी के नाम में समाइ = लीन हो जाते हैं।

अंदरु रचै हरि सच सिउ;
रसना हरि गुण गाइ॥

जो अन्दरु = हार्दिक तौर पर सच्चे परमात्मा के साथ रचै = मिल जाते हैं तथा जिह्वा द्वारा भी हरि = प्रभु जी के गुणों को गाहि = गाते हैं, वे ही गुरुमुख हैं।

भाई रे जगु दुखीआ दूजै भाइ॥

हे भाई! द्वैत भाव के कारण सारा संसार ही दुखी हो रहा है अर्थात द्वैत भाव में लगे हुए जीव आशा, तृष्णा, काम, क्रोधादि में लगे हुए हैं।

गुर सरणाई सुखु लहहि
अन दिनु नामु धिआइ॥1॥ रहाउ॥

वे गुर = गुरु की सरणाई = शरण में पड़कर आत्मिक सुख को या लहहि = लेते हैं भावार्थ प्राप्त कर लेते हैं अथवा जो अनदिनु = दिन-रात अथवा प्रतिदिन नाम को धिआइ = नाम का जप करते हैं।

साचे मैलु न लागई
मनु निरमलु हरि धिआइ॥

वे सच्चे पुरुष ब्रह्म में अभेद हो गए हैं फिर उन्हें संसार के विकारों की मैल नहीं लगई = लगती है जिन्होंने प्रभु जी के नाम को जप कर अपने मन को निरमलु = निमर्ल कर लिया है।

गुरमुखि सबदु पछाणीऐ
हरि अंम्रित नामि समाइ॥

हे भाई! आओ! गुरुमुखजनों की संगत करके सबदु = ब्रह्म की पहचान करें जब अमृत रूपी हरि = प्रभु जी का नाम प्राप्त हो जाता है तो फिर नामि = नामी वाहिगुरू में समाइ = अभेद हो जाता है।

गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ
अगिआनु अंधेरा जाइ॥2॥

जब सतगुरू जी ने प्रचंडु = अत्यन्त तीव्रता वाला अपरोक्ष ज्ञान रूपी दीपक हृदय में बलाइआ = जगा दिया तो फिर हृदय में से अज्ञानता रूपी अंधेरा = अन्धकार चला जाता है।

मनमुख मैले मलु भरे
हउमै त्रिसना विकारु॥

मनमुख व्यक्ति विषय विकारों के कारण मैले = अशुद्ध हो रहे हैं और शारीरिक तौर पर भी पापों के साथ भरे हुए हैं और हउमै = अहंभाव व त्रिशना = तृष्णा यानि कि रसों तथा पदार्थों की भूख व कामादिक विकारों में फँसे हुए हैं।

बिनु सबदै मैलु न उतरै
मरि जंमहि होइ खुआरु॥

गुरु के सबदै = उपदेश के बिना उन मनमुख लोगों की मैल नहीं उतरती है, इसलिए वे मरते व जन्म लेते रहते हैं तथा संसार में खुआरु = दुखी होते हैं।

धातरु बाजी पलचि रहे
ना उरवारु न पारु॥

यह दुनिया धातुर बाजी = नष्ट हो जाने वाली माया

की बाजी बनाई हुई है। सारे जीव इसी के अन्दर पलचि = फँस रहे हैं अथवा धातुरबाजी = जो नष्ट होने वाली संसार रूपी बाजी है सारे जीव इसी के इन्द्रजाल में फँसे हुए हैं।

गुरमुखि जप तप संजमी
हरि कै नामि पिआरु॥

गुरुमुखजनों द्वारा किया हुआ जप, तप और संयम = इन्द्रियों का दमन सब सफल है क्योंकि वे हरि = प्रभु जी के नामि = नाम के साथ पिआरु = स्नेह करते हैं अथवा गुरुमुखों का जप, तप, सेवा व संयम में रहना यही है जो कि वे परमात्मा के साथ प्यार करते हैं।

गुरमुखि सदा धिआईऐ
एकु नामु करतारु॥

इसलिए गुरमुखि = गुरुमुखजनों की संगत में मिलकर अथवा गुरुमुख होकर सदैव ही उसका सिमरन करना चाहिए भावार्थ कर्तापुरुष या करतार का नाम जपना चाहिए जो कि सारे जीवों का आधारु = आसरा है अथवा जो समस्त जीवों के हृदयों का ब्रह्म रूप चेतन है।

नानक नामु धिआईऐ
सभना जीआ का आधारु॥

सतगुरू जी कहते हैं कि हे भाई! उस परमात्मा के नाम को ध्यान द्वारा ध्यायें, जो सारे जीवों का आधारु = सहारा है तथा सारे जीवों के हृदय का ब्रह्म रूप चेतन है।

श्री रागु महला 3
मनमुखु मोहि विआपिआ
बैरागु उदासी न होइ॥

हे भाई! मनमुखु = मन के पीछे चलने वाले पुरुष सदैव ही पदार्थों के मोहि = मोह में विआपिआ = लगे रहते हैं, जिस वजह से उन्हें बैरागु = वैराग्य व माया से निर्लिप्त रहने वाली अवस्था प्राप्त ना = नहीं होती है भावार्थ वे मनमुख लोग यदि त्यागियों जैसा भेष धारण भी कर लें तो भी उनके मन में वैराग्य या उदासी उत्पन्न नहीं होती है बल्कि पदार्थों का मोह उन्हें लगा ही रहता है -

सबदु न चीनै सदा दुखु
हरि दरगहि पति खोइ॥

वे मनमुख सबदु = गुरु के उपदेश अथवा ब्रह्म के स्वरूप को चीनै = जानते नहीं हैं, जिस कारण से उन्हें सदैव ही जन्म-मरण का दुख लगा ही रहता है तथा वे हरि = प्रभु जी के दरगाहि = दरबार में अपनी पति = इज्जत को खोहि = गंवा लेते हैं अथवा संसार रूपी दरगाह में भी वे कामादिक विकारों का शिकार होकर अपनी इज्जत खोहि = खराब कर लेते हैं।

हउमै गुरमुखि खोईऐ
नामि रते सुखु होइ॥1॥

गुरुमुखजन हउमै = अहंभाव को खोईऐ = समाप्त कर लेते हैं और नाम में रते = रंग होने के कारण उन्हें सुख स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति होहि = हो जाती है।

मेरे मन; अहि निसि पूरि रही नित आसा॥

ऐ मेरे मन! मनमुखों के हृदय में तो अहिनिसि = दिन-रात नित = निस प्रतिदिन पदार्थों की आशा पूरी = परिपूर्ण रहती है अर्थात उन्हें धन व पदार्थों की इच्छा लगी रहती है।

सतगुरु सेवि मोहु परजलै
घर ही माहि उदासा॥1॥रहाउ॥

लेकिन गुरुमुखजनों का मोह परजलै = समाप्त हो जाता है क्योंकि वे सतगुरू की सेवा में लगे रहते हैं, वे गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही देहाध्यास से ऊपर उठ जाते हैं अथवा अन्तःकरण रूपी घर में उदास होकर रहते हैं।

गुरमुखि करम कमावै बिगसै
हरि बैरागु अनंदु॥

गुरुमुखजन निष्काम कर्म करते हुए आन्तरिक तौर पर बिगसै = खिले रहते हैं।

अहि निसि भगति करे दिनु राती
हउमै मारि निचंदु॥

वे अहिनिसि = दिन रात अथवा लगातार प्रभु जी की भक्ति करते रहते हैं, जिसके फलस्वरूप उन्हें अज्ञान रूपी रात से ज्ञान रूपी दिन का प्रकाश हुआ है अथवा वे दिन-रात जीवन मुक्ति का आनन्द लेते हैं और दिन रात उसकी भक्ति करते रहते हैं और हउमै को मारकर निचिंदु = निश्चिंत हो जाते हैं भावार्थ उन्हें फिर किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं रह जाती है।

वडै भागि सतिसंगति पाई
हरि पाइआ सहजि अनंदु॥

हे भाई! जिनके भाग्य जागृत हो चुके हैं उन्हें सत्संग की प्राप्ति प्राप्त हो गई है अर्थात उन्होंने सतगुरू जी की संगत करके सहजानन्द रूपी हरि = प्रभु जी को पा लिया है।

(शेष पृष्ठ 50 पर)

खालसाई जाहो-जलाल तथा बुलन्दावस्था का प्रतीक - होला महल्ला

डा. गुरविंदर कौर

'होला' तथा 'महल्ला' दो शब्दों को जोड़ से बना है 'होला-महल्ला'। विद्वानों के अनुसार 'होला' अरबी भाषा तथा महल्ला फारसी भाषा का शब्द है। होल, हूल तथा होला महल्ला आदि मिलते-जुलते शब्द हैं। हूल का अर्थ है नेक कार्यों के लिए जूझना, शीश को तली पर रखकर खेलना, तलवार की धार पर चलना आदि। महान कोष में होला महल्ला का अर्थ है - 'हमला' तथा 'जाए हमला करना' तथा महल्ला के अर्थ हैं - हमले वाली जगह। इस प्रकार से होला महल्ला का सम्पूर्ण अर्थ है - किसी निश्चित जगह पर हमला करके जीत का नगाड़ा बजाना तथा खुशियों के जश्न मनाने।

इतिहास साक्षी है कि होला-महल्ला का पावन पर्व साहिब-ए-कमाल, श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने खालसा पन्थ को होली की जगह प्रदान किया है।

होली भारत का एक मौसमी त्यौहार है जो कि प्राचीन काल से प्रत्येक वर्ष, पृथक-पृथक क्षेत्रों में किसी न किसी रूप मे बहुत ही चाव व उल्लास सहित मनाया जाता है। यह बसन्त ऋतु के आगमन, उल्लास व खुशियों का त्यौहार है जिसका सम्बन्ध फाल्गुन माह की सुहावनी ऋतु के साथ है। होली के त्यौहार के साथ परमात्मा के सच्चे भक्त प्रहलाद, उसके पिता हिरण्याकश्यप (जिसने पुत्र को मरवाने के कई यत्न किए) तथा बुआ (फूफी) होलिका (बुरी सोच वाली) का प्रसंग जुड़ा हुआ है। यहाँ पर प्रभु जी ने नरसिंह का रूप धारण करके भक्त प्रहलाद की रक्षा की। भाई गुरदास जी ने अपनी रचना में इसका वर्णन इस प्रकार से किया है -

घरि हरणाखस दैत दे कलरि कवलु भगतु प्रहिलाद।
पड़हन पठाइआ चाटसाल पाँधै चिति होआ अहिलाद।
सिमरै मन विचि राम नाम गावै सबदु अनाहद नाद।
भगति करनि सभ चाटड़ै पाँधे होइ रहे विसमादु।
राजे पासि रुआइआ दोखी दैति वधाइआ वादु।
जल अगनी विचि घतिआ जलै न डुबै गुर परसादि।
कढि खड़गु सदि पुछिआ कउणु सु तेरा है उसतादु।
थंम पाड़ि परगटिआ नरसिंघ रुप अनूप अनादि।
बेमुख पकड़ि पछाड़िअनु संत सहाई आदि जुगादि।
जै जै कार करनि ब्रहमादि।

भाई गुरदास जी, वार 10/2

भारतीय परम्परानुसार भक्त प्रहलाद भलाई का प्रतीक है और हिरण्याकश्यप व होलिका बुराई का, भलाई की बुराई पर जीत के लिए एक दूसरे पर रंग डालकर खुशी का प्रकटीकरण किया जाने लगा। इस प्रकार से भारत में होली का त्यौहार रंगों के त्यौहार के रूप में विकसित हुआ लेकिन समय बीतने पर इसमें बहुत सारी कुरीतियाँ आ गईं, जिस कारण से इस पावन त्यौहार ने भद्दा रूप धारण कर लिया। होली मनाने के बहाने मूर्ख लोग नशा पी पीकर टोलियों के रूप में बजारों और गलियों में से गुजरने वाले लोगों पर रंग तथा गन्दगी डालकर उन्हें तंग भी करते हैं तथा साथ ही वे शरारतें भी करते हैं। आजकल तो होली के अवसर पर अत्यन्त हानिकारक रसायनिक रंगों का प्रयोग भी होने लग पड़ा है।

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर सांसारिक मौज-मस्ती करने के स्थान पर परमार्थिक आनन्द देने वाली होली खेलने की प्रेरणा की गई है -

गुरु सेवउ करि नमसकार ॥ आजु हमारै मंगलचार ॥
आजु हमारै महा अनंद ॥ चिंत लथी भेटे गोबिंद॥1॥
आजु हमारै ग्रिहि बसंत ॥ गुन गाए प्रभ तुम् बेअंत ॥
1 ॥ रहाउ ॥
आजु हमारै बने फाग ॥ प्रभ संगी मिलि खेलन लाग॥
होली कीनी संत सेव ॥ रंगु लागा अति लाल देव ॥2॥
मनु तनु मउलिए अति अनूप ॥
सूकै नाही छाव धूप ॥ सगली रुती हरिआ होइ ॥
सद बसंत गुर मिले देव ॥3॥
बिरखु जमिए है पारजात ॥ फूल लगे फल रतन भाँति॥
त्रिपति अघाने हरि गुणह गाइ ॥
जन नानक हरि हरि हरि धिआइ ॥ अंग - 1180

श्री गुरू गोबिंद सिंह जी द्वारा श्री आनंदपुर साहिब में खेली जाने वाली होली की शानो-शौकत का वर्णन भाई

नंदलाल गोया जी ने किया है -

गुलि होली बबागि दहिर बू करद,
लबि चूं गुंचा रा फरखंदा खू करद।
गुलाबो अंबरो मशको अबेरी,
चू बारानि बारिश अज सू बसू करद।
जहे पिचकारीए पुर जाअफरानी,
कि हर बेरंग रा खुशरंगो बू करद।
गुलालि अफशानीइ दसति मुबारिक,
जमीनो आमाँ रा सुरखरु करद।
दो आलम गशत रंगीं अज तुफैलश,
चू शाहम जामा रंगीन दर गुलू करद।
कसे कू दीद दीदारि मुक्दस,
मुरादि उमर रा हासिल निको करद।
शवद कुरबान जकि राहि संगत,
दिलि गोया हमीं रा आरजू करद।

अर्थात होली का फूल खिला और सुगन्ध के द्वारा सारा बाग महक पड़ा तथा प्रियतम का मुँह कली की भांति खिल गया। गुलाब, अम्बर, कस्तूरी तथा सुगन्धियों की वर्षा चहुँओर होने लग पड़ी। केसर के द्वारा भरी हुई पिचकारी ने सुन्दर व सफेद कपड़ों को रंग दिया। जब दशमेश जी ने रंगा हुआ चोला पहना हुआ था तो मानों उनकी कृपा से लोक व परलोक दोनों ही रंगे हुए थे। जिस व्यक्ति ने भी इस समय गुरू जी के दर्शन किए उसने अपनी सारी उम्र भर के लिए आशाओं की पूर्ति कर ली। मैं सतगुरू जी की चरण-रज से कुर्बान जाता हूँ। मेरे मन की ज्वलन्त इच्छा यही है कि मैं हमेशा सतगुरू जी के दर्शन ही करता रहूँ।

सिक्ख इतिहास की ध्यानपूर्वक विचार करने पर पता चलता है कि श्री गुरू नानक देव जी से लेकर श्री गुरू गोबिंद सिंह तक सारे गुरू साहिबान का उद्देश्य सुदृढ़ समाज का सृजन था, यही कारण था कि उन्होंने उस समय प्रचलित त्यौहारों को मनाने के ढंगों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किए। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने होली को नवीन अर्थ प्रदान किए तथा उसे मनाने के पृथक ढंग व तरीके अपनाए। गुरू जी ने 'होली' का नाम 'होला' रखा तथा साथ में 'महला' शब्द को जोड़कर शब्दावली में इन्कलाबी परिवर्तन कर दिया। उस समय से ही होला-महला खालसा पन्थ की बहादुरी का त्यौहार बन गया। कवि सुमेर सिंह ने दशमेश पिता जी के आदेश को इस प्रकार से कलमबन्द किया है -

औरन की होली मम होला।
कहियो किपानिध बचन अमोला।

अन्य कवियों ने इस क्रान्तिकारी परिवर्तन को अपने शब्दों में इस प्रकार से ब्यान किया है -

चढयो चारु चेतन बसंत रिदै संतन के,
हिदै के हुलास बोलैं शुध ब्रहिम बोला है।
निजानंद खेलबे को प्रेम के गुलाब बीच,
महावाक केसरी अनूप रंग घोला है।
छिरकयो निहाल सिंघ उतम जगयासीओ पै,
गयान को गुलाल फैंकयो नीको जु अमोला है।
सुनो साधसंगति सरबत अज खालसा जी!
जगत की होली और संतन का होला है।
(संत निहाल सिंघ सोहलाँ)

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा होली के त्यौहार को खालसा पन्थ के लिए होला-महल्ला में बदलने की प्रक्रिया, उस समय की आवश्यकतानुसार एक बहुत ही उपयुक्त कदम था। समझने वाली बात यह है कि यह केवल शब्द-जोड़ का परिवर्तन नहीं है, बल्कि दबे-कुचले लोगों को मानसिक तौर पर बलवान बनाने अर्थात गुलाम मानसिकता से आजाद सोच के परिवर्तन का प्रकटीकरण है। मुगल शासन काल के समय घोड़े की सवारी करनी, फौज रखनी, नगाड़ा बजाना तथा युद्ध के समय फौज द्वारा पृथक निशान लेकर युद्ध के लिए प्रस्थान करना आदि की सख्त मनाही थी, लेकिन कलगीधर पातशाह ने इन मनाहियों की विरोधता करते हुए इन सारी चीजों को होला-महल्ला का आवश्यक अंग बना दिया। इसलिए जहाँ पर होला-महल्ला, समाज में प्रचिलत होली की कुरीतियों से मुक्त है, वहीं पर इसे मनाने के लिए आरम्भ किया गया ढंग-तरीका भी खालसे में बुलन्दावस्था तथा वीर-रस वाली भावना का संचार करने वाला है।

इतिहासकारों के अनुसार होला-महल्ला 'खालसा-पन्थ' की जन्म भूमि श्री आनन्दपुर साहिब की पावन धरती पर साहिब-ए-कमाल श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा अपनी दूरदर्शी अगुवाई के अन्दर संवत 1757 तथा संवत नानकशाही 231 के अनुसार चैत्र वदी एकम को मनाया जाना शुरू हुआ। भाई कान्ह सिंह जी के शब्दों में, श्री गुरू गोबिन्द सिंह साहिब ने खालसा पन्थ को शस्त्र तथा युद्ध विद्या में निपुण बनाने के लिए यह रीति चलाई थी। दो दल बनाकर मुखी जत्थेदारों की अगुवाई में एक विशेष स्थान पर कब्जा करने के लिए आप हमला करवाते तथा स्वयं इन सारे कर्तव्यों को आप स्वयं निरीक्षण किया करते थे और जो दल कामयाब हो जाता था, उसे दीवान में सिरोपाओ प्रदान करते थे। इस तथाकथित युद्ध के बारे में डा. रतन सिंह (जग्गी) लिखते हैं कि वास्तव में यह सिक्ख सैनिकों को युद्धाभ्यास करवाने के लिए एक

बनावटी युद्ध होता था। सैनिकों को दो दलों में बाँट कर एक दल को सफेद तथा दूसरे को केसरी वस्त्र पहनने के लिए कहा जाता था। बनावटी युद्ध के भी कई रूप होते थे। मुख्य तौर पर दोनों दलों को लोहगढ़ पर कब्जा करने के लिए प्रेरित किया जाता था। जो दल पहले कब्जा कर लेता उसे इनाम व सिरोपाओ दिए जाते थे या फिर एक दल का लोहगढ़ पर काबिज घोषित किया जाता और दूसरे दल के काबिज दल से किला छीनने के लिए कहा जाता और वे इस किले को छीनने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगाते तत्पश्चात जीतने वाले दल को खूब इनाम दिए जाते थे। इस समय विशेष उद्देश्य से तैयार करवाए गए किला लोहगढ़ के स्थान पर युद्धाभ्यास का दृश्य प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत हो जाता था। कहा जाता है कि सतगुरू जी द्वारा इस युद्धाभ्यास में तीर तथा बन्दूक चलाने की आज्ञा नहीं थी।

खालसा पन्थ ने तीन सदियाँ बीत जाने के बाद भी, श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा आरम्भ किए गए 'होला महल्ला' की परम्परा को कायम रखा हुआ है। वर्तमान समय तक सिक्ख संगत प्रत्येक वर्ष मार्च माह में, श्री आनन्दपुर साहिब में होला महल्ला उसी पारम्परिक शान से मनाती आ रही है। तीन दिन कीरतपुर साहिब के समागमों के बाद और होली से एक दिन पहले व एक दिन बाद (फाल्गुन की चौदष से चैत्र माह की एकम तक) तक होला महल्ला के समागम श्री आनन्दपुर साहिब में आयोजित होते हैं। श्री आनन्दपुर साहिब को जाने वाले सारे रास्तों पर तथा गुरू की नगरी में संगत द्वारा, यात्रियों के लिए असंख्य गुरू के लंगर होते हैं, जहाँ पर कि चौबीसों घंटे लंगर वितरित किया जाता है। श्रद्धाभावना तथा उत्साह सहित लाखों की संख्या में श्रद्धालुजन, श्री आनंदपुर साहिब की धरती पर नतमस्तक होते हैं। केवल पंजाब में से ही नहीं बल्कि सारे भारत तथा विदेशों से आए हुए श्रद्धालुजनों का लबालब भरा हुआ समुद्र, इस स्थान की शोभा को अर्शों तक पहुँचा देता है। इस अवसर पर पृथक-पृथक धार्मिक जत्थेबन्दियों द्वारा श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की पावन हुजूरी में दीवान सजाए जाते हैं, जहाँ पर कि निरन्तर गुरवाणी-कीर्तन, गुरू-कथा तथा गुरमति विचारों के प्रवाह चलते रहते हैं। ढाडी जत्थों द्वारा भी वीर रस वाली वारों का गायन होता है। सुदूरवर्ती स्थानों से भारी संख्या में आए हुए श्रद्धालुजन गुरू-चरणों के साथ जुड़कर गुरवाणी-कीर्तन, गुरु-इतिहास तथा गुरमति विचारों को श्रवण करके निहाल होते हैं। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी द्वारा खालसा पन्थ के धार्मिक पर्व को सुन्दर व सुव्यवस्थित ढंग से मनाने के लिए अनेकों कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। विशेष तौर पर श्री केशगढ़ साहिब के पावन स्थान पर तीन रातों के लिए महान कीर्तन दरबार, कवि दरवार तथा ढाडी दरबार का आयोजन किया जाता है।

होला-महल्ला के तीसरे दिन गुरू की पावन नगरी में तख्त श्री केशगढ़ साहिब से अरदास करने के बाद जयकारों की आसमान को छूने वाली आवाजों के साथ महान नगर कीर्तन या महल्ला आरम्भ होता है। इसकी अगुवाई श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की छत्रछाया में पाँच प्यारे करते हैं। इस मौके पर जब आनन्दगढ़ किले की तरफ से, शहीदी बाग के बीच से निकलकर तथा घोड़ों, हाथियों व गाड़ियों में सवार होकर हजारों की संख्या में निहंग सिंह प्राचीन हथियारों व शस्त्रों के साथ लैस होकर व सज-धज कर महल्ले में शामिल होते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि 'खालसा अकाल पुरख की फौज' मानो कहीं पर आक्रमण करने के लिए जा रही है। नगाड़ों व नरसिंहों की गगनचुम्बी आवाजों पर निहंग सिंहों के ऊँचे-ऊँचे दुमाले बहुत ही विलक्षण व मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करते हैं। नीली, केसरी तथा रंग-बिरंगी दस्तारों के साथ सजे हुए सिंह और सिंहनियाँ, इस नगर कीर्तन की सुन्दरता को चार चाँद लगा देते हैं। खुशी के अतिरेक में आकर निहंग सिंहों तथा संगत द्वारा एक दूसरे पर गुलाल व केसर आदि रंगों को डाला जाता है तथा इत्र जैसी सुगन्धियों का छिड़काव किया जाता है, जिसके द्वारा वातावरण और भी रंगीन तथा खुशबूदार हो जाता है।

यह अद्वितीय नगर कीर्तन या महल्ला किला लोहगढ़ पर तथा माता जीतो जी के गुरुद्वारे की यात्रा करता हुआ शाम तक चरण-गंगा के खुले मैदान में पहुँच जाता है। इस स्थान पर निहंग सिंहों द्वारा घुड़सवारी तथा गतकेबाजी के वीर रस वाले जौहर दिखाए जाते हैं। एक-एक जवान दो-दो प्रशिक्षित घोड़ों को नियन्त्रित करता हुआ अत्यन्त तीव्र गति से मैदान में दौड़ाता है। चरण गंगा का मैदान 'बोले सो निहाल, सति श्री अकाल' के जयकारों के द्वारा गूँज उठता है। इस समय गुरू के प्यार में सराबोर श्रद्धालुजनों का लबालब भरा हुआ समुद्र अद्भुत नजारा पेश करता है। वास्तव में ही श्री आनन्दपुर साहिब के अन्दर होला-महल्ला का नजारा अद्वितीय होता है, जिसे कि शब्दों में ब्यान कर पाना कठिन है। 'कहिबे कउ सोभा नहीं' कथनानुसार केवल कहने या लिखने मात्र से ही नहीं वरने होला-महल्ला के अवसर पर

खालसा पन्थ के जाहो-जलाल को प्रत्यक्ष रूप से देखने पर ही इसका आभास हो जाता है। इस नगर कीर्तन में शामिल होने वाले श्रद्धालुजन, खालसा पन्थ के जाहो-जलाल को आँखों द्वारा देख कर निहाल होते हैं तथा स्वयं को भाग्यशाली समझते हैं।

सिक्ख संगत को होला महल्ला जहाँ जोश, खुशी व उल्लास से भरपूर करता है, वहीं वह, उन्हें आत्मिक आनन्द भी प्रदान करता है। यही कारण है कि पुनः सारा साल भर श्रद्धालुजन इस बात की प्रतीक्षा करते रहते हैं कि कब होला महल्ला का पर्व आए ताकि वे श्री आनंदपुर साहिब पहुँच कर होला-महल्ला के जोड़ मेले में श्रद्धा भावना सहित हाजिर होकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करे। निःसन्देह, होला-महल्ला खालसाई जाहो-जलाल तथा गुरू खालसा की बुलन्दावस्था का प्रतीक है।

(पृष्ठ 46 का शेष)

सो साधू बैरागी सोई हिरदै नामु वसाए॥

हे भाई! सो = वह ही साधू = साधना करने वाला पुरुष है और सोई = वह ही वैरागी = वैराग्यवान है जिसने अपने हृदय में परमात्मा के नाम को बसा लिया है भावार्थ किसी भी भेष या मत को धारण कर लेने से कोई भी साधू या वैरागी नहीं बन जाता है क्योंकि साधू तो नाम रसिक बनने या निर्मल कर्मों के द्वारा ही हो सकता है।

अंतरि लागि न तामसु मूले
विचहु आपु गवाए॥

उन गुरुमुखों के अन्तःकरण या हृदय रूपी बर्तन में, विकारों आदि की गन्दगी नहीं रहती है और मूले = तनिक सी भी तामसु = तमोगुणी वृत्ति आदि नहीं रहती है अर्थात जिस प्रकार से यदि किसी बर्तन में फफूँदी या कोई अन्य गन्दगी लगी हुई हो तो उसके अन्दर डाले हुए अच्छे पदार्थ, दूध व घी आदि भी खराब हो जाते हैं, उसी प्रकार से गन्दे हृदय में शुभ गुण टिकते नहीं हैं लेकिन गुरुमुखजनों का हृदय या अन्तःकरण रूपी बर्तन तो स्वच्छ हो चुका होता है क्योंकि उन्होंने अपने मन में से आपु = अहंभाव समाप्त कर लिया होता है।

नामु निधानु सतगुरु दिखालिआ
हरि रसु पीआ अघाए॥

उन गुरुमुखजनों के हृदय में से सतगुरु जी ने कृपा करके नाम का निधानु = खजाना दिखा दिया है। वे हरि रसु = प्रभु जी के नाम रस को पीकर अघाए = तृप्त हो गए हैं और संसारिक पदार्थों की तो क्या बात है बल्कि वे तो ब्रह्मलोक या स्वर्गलोक के पदार्थों की भी इच्छा नहीं रखते हैं।

जिनि किनै पाइआ साधसंगती
पूरै भागि बैरागि॥

जिस किसी ने भी परमात्मा को पाया है उसने साधु संगत के माध्यम से ही पाया है भावार्थ जिन्हें अच्छे भाग्यों की बदौलत गुरू की संगत प्राप्त हो गई है, वे ही माया से निर्लिप्तता आदि शुभ गुणों को धारण कर पाते हैं।

मनमुख फिरहि न जाणहि सतगुरु
हउमै अंदरि लागि॥

मनमुख लोग अनेकों प्रकार के भेषों को धारण करके फिरहि = घूमते रहते हैं लेकिन वे सतगुरू की महिमा को नहीं जानते हैं अर्थात वे गुरू के बिना ही इस संसार में विचरण करते रहते हैं अथवा विभिन्न प्रकार की योनियों में भटकते रहते हैं। उनके अन्दर हउमै = अहंभाव रूपी गन्दगी लगी हुई है। जिस प्रकार से यदि किसी बर्तन के अन्दर कोई गन्दगी लगी हुई हो तो उसके अन्दर अच्छे पदार्थ डाले नहीं जाते हैं, उसी प्रकार से मनमुखों के हृदय रूपी बर्तनों में अहंकार की गन्दगी लगी हुई होती है, जिसकी वजह से ही उनके अन्दर शुभ गुणों रूपी पदार्थ टिक ही नहीं पाते हैं।

नानक सबदि रते हरि नामि रंगाए
बिनु भै केही लागि॥4॥8॥41॥

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि जो सबदि रते = गुरू जी के उपदेश अथवा प्रेम के रंग में रंगे हुए हैं, उन्हें प्रभु जी ने अपने नाम के रंग में रंग लिया है। जब तक हम सतगुरू जी के निर्मल भय को अपने हृदय में धारण नहीं करते हैं, तब तक हमें प्रभु जी की भक्ति की लगन कैसे लग सकती है? भावार्थ नहीं लग सकती है अथवा जब तक हम सतगुरू जी के भय को धारण नहीं करते हैं, तब तक हमारे हृदय रूपी बर्तन में लगी हुई गन्दगी दूर कैसे हो सकती है? भावार्थ नहीं हो सकती है।

'चलता'

भाई नन्द लाल जी
गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 49)

बा-चशमि जबनाक चूं बीरुं बर आमदी,
शरमिंदा गशत अज रुखि तू आफताबि सुबहा।

जब तुम नीद से भरी हुई आँखों को लेकर बाहर आए तो उस समय तुम्हारे मुख को देखकर प्रात:कालीन सूर्य भी शर्मिन्दा हो गया।

अज मकदमि शरीफ जहाँ-रा दिहद फरोग
चूं बर-कशद नकाब जि रुखि आफताबि सुबहा।

जब प्रात:कालीन सूर्य अपने मुख के ऊपर से बुर्के को उतारता है तो फिर वह अपने सौभाग्यशाली आगमन से सारे संसार को रौशन कर देता है।

बेदारी असत जिंदगीइ साहिबानि शौक
गोया हराम करदम अज आइंदा खाबि सुबहा।

जिज्ञासुओं की जिन्दगी तो नित्य प्रतिदिन का जगराता है। गौया! मेरे लिए तो भविष्य में प्रात:कालीन नींद हराम है।

(18)

मी-बुरद दीनो दिलम ईं चशमि शोख
मी-कशद अज चाहि गम ईं चशमि शोख।

यह शोख आँख मेरे दीन और दिल से जाती है। यह शोख आँख मुझे दुखों के कुएँ से बाहर निकालती है।

काकलि उ फितना जनि आलम असत
रौनक अफजाइ जहाँ ईं चशमि शोख।

उसकी लट दुनिया में आफत मचा देती है और यह शोख आँख संसार को रौनकें प्रदान करती है।

खाकि पाइ दोसतीए दिल बवद,
हादीए राहि खुदा ईं चशमि शोख।

दिल, सज्जन के चरणों की धूल बन जाए और यह शोख आँख परमात्मा की मार्गदर्शक हो जाए -

कै कुनद उ सूइ गुलि नरगस निगाह
हर की दीदा लजति आँ चशमि शोख।

जिस किसी ने भी उस शोख आँख को एक नजर से भी देख लिया, उसी के दिल का भ्रम दूर हो गया।

(19)

बहोश बाश कि हंगामि नौबहार आमद
बहार आमद वा यार वा करार आमद।

होश में आओ कि नई बहार का समय आ गया है, बहार आ गई है। यार आ गया है और दिल को शान्ति आ गई है।

दरुनि मरदुमि चशम जि बस कि जलवा गरसत
बहर तरफ कि नजर करद रुइ यार आमद।

आँख की पुतली में उसका जलवा इतना समा चुका है कि वह जिधर भी देखती है उधर ही उसी मित्र प्यारे का मुख दिखाई पड़ता है।

ब-हर तरफ कि रवद दीदा मीरवम चि कुनम
दरीं मुक्दमा मा रा चिह अखतिआर आमद।

जिधर भी मेरी आँख जाती है मैं भी उधर ही जाता हूँ। मैं क्या करूँ? इस सम्बन्ध में भला हमारे वश में क्या है?

खबर दिहंद ब-यारानि मुद्ई कि इमशब
अनलह्क जदा मनसूर सूइ दार आमद।

दावेदार दोस्तों के पास कोई यह खबर लेकर आया कि आज रात्रि में अन-अल-हक (मैं परमात्मा ही हूँ) कहता हुआ मनसूर सूली की तरफ जा रहा था।

खबर दिहेद ब-गुलहा कि बिशगुफंद हमा
अजी नवेद कि जाँ बुलबुल हजार आमद।

फूलों को यह खुशखबरी दे दो कि सारे फूल खिल जाएँ। यह खबर उस गाती हुई बुलबुल की तरफ से आई है-

खुदा माँद जि गेरत जुदा व मन हैराँ
हदीसि शौकि ते अज बस कि बे-शुमार आमद।

खुदा गैरत के कारण पृथक रहा और मैं वैसे हैरान रहा कि तुम्हारे शौकों की कहानी का कोई अन्त नहीं है।

खिआलि हलकाइ जुलफि तू मी-कुनद गोया
अजीं सबूब कि दिल अज शौक बे-करार आमद।

गोया! तुम्हारी जुल्फ के कुण्डल का ध्यान धरता है

इसलिए कि शौक के कारण दिल भटकता है।

(20)

तबीब आशिकि बेदरद रा दवा चि कुनद
तुरा कि पाए बवद लंग रहिनुमा चि कुनद।

पक्के आशिक की दवा भला वैद्य क्या कर सकता है? जब तुम्हारी ही टांगे आगे निकली हैं तो फिर रास्ता दिखाने वाला क्या कर सकता है?

जमालि उ हमा जा बे-हिसाब जलवागर असत
तू दर हिजाबि खुदी यार महि लकाकि कुनद।

उसका प्रत्येक जलवा, प्रत्येक जगह बिना घूंघट के रूपमान है। तुम तो स्वयं हउमै के पर्दे के नीचे हो तो फिर चाँद जैसा सुन्दर, भला क्या कर सकता है?

तुरा कि नीसत बयक गूना खातिरि मजमूअ
मुकामि अमनो खुश गोशा सरा चि कुनद।

तुम्हें, जिसे कि तनिक सा भी दिल का टिकाव प्राप्त नहीं है, उसके लिए कोई एकान्त जगह अथवा किसी हवेली का कोई सुन्दर कोना क्या कर सकता है?

बगैरि बदरकाइ इशक कै रसी ब-मंजलि यार
बगैर जजबाइ शंकि तू रहिनुमा चि कुनद।

बिना प्रीति के तुम भला कैसे उस सज्जन की दरगाह में पहुँच सकते हो? तुम्हारे शौक के जज्बे के बिना, भला, मार्ग दिखाने वाला क्या कर सकता है?

चु सुरमाइ दीदा कुनी खाकि मुरशद अै गोया
जमालि हक निगरी बा तूतीआ चि कुनद।

हे गोया! जब तुम गुरू जी की चरण धूल को अपने नेत्रों का सुर्मा बना लोगे, तब कहीं तुम परमात्मा के जलवे को देख सकोगे। तुम्हारे लिए अन्य कोई सुर्मा किस काम का है?

सबा चूं हलका हाइ जुलफि उ रा शाना मी साजद
अजिब जंजीर अज बहरि दिलि दीवाना मी साजद।

पूरब की हवा जब उसकी लटों की कंघी करती है तो फिर समझ लो कि मेरे दीवाने दिल के लिए वह एक अजीब सी जंजीर बनाती है।

न दानिसतेम अज रुजि अजल ईं नकशि आदम रा
कि नकाश अज बराए माँदनि खुद खाना मी साजद।

आदि समय से ही हमने मनुष्य के इस ढांचे को नहीं समझा है कि परमात्मा अपने रहने के लिए घर बना रहा है।

दिलि आशक ब-अंदक फुरसति माशूक मी गरदद
सरा पा जाँ शवद हर कस कि बा जानानह मी साजद।

आशिक का दिल थोड़े समय में ही माशूक का बन जाता है। प्रत्येक वह व्यक्ति जो माशूक के साथ अपना सम्बन्ध बनाए रखता है वह स्वयं सिर से पैरों तक जान बन जाता है।

बराए गुरदाइ नाँ गिरदि हर दुनी चि मी गरदी
तमआ दीदी कि आदम रा असीरि दाना मी साजद।

रोटी के एक टुकड़े के लिए तुम क्यों प्रत्येक कमीने के पीछे दौड़ते घूमते हो? तुमने देखा ही है लोभ प्रत्येक व्यक्ति को एक दाने के लिए कैदी बना डालता है।

मगो अज हालि लैला रा दिलि शोरीदाइ गोया
कि शराह किसाइ मजनूं मरा दीवाना मी साजद।

ऐ गोया! तुम लैला का हाल उस सिर फिरे दिल को मत बताना क्योंकि मजनू की कहानी मेरे जैसे दीवाने को ही समझ आती है।

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक फरवरी, पृष्ठ - 54)

प्यार! उत्तम निर्मल संवेग

संवेगों को नियन्त्रित करके उन्हें उपयुक्त दिशा देना या सृजनात्मक तरफ लगाना कठिन नहीं है बल्कि अत्यन्त सरल है। बस आवश्यकता है नकारात्मक भावनाओं को सकारात्मक दिशा में लगाने की यानि कि अच्छी दिशा में लगाने की। यह करने के बाद ही हम अपने हाथों से दूसरों को देना सीख सकते हैं, प्यार करना सीख सकते हैं। आत्म-समर्पण करना ही उच्च कोटि का 'योग' है। जब तक हम आत्म समर्पण नहीं करते हैं, यानि कि हम स्वयं को, परमात्मा के पास अर्पित नहीं कर देते हैं, तब तक हम कुछ भी सीख नहीं सकते हैं। अतः हमें आवश्यकता है आत्म समर्पण करने की। आत्म सिद्धि की तीन सीढ़ियाँ हैं। पहली सीढ़ी है कि हे प्रभु जी! मेरे ऊपर कृपा करो, हमें अपना बना लो, मैं तुम्हारा हूँ। इसके बाद दूसरी सीढ़ी है जबकि हमें सत्य के बारे में विश्वास हो जाता है। उस समय हमारी धारना बनती है कि 'तुम मेरे हो' 'तुम मेरे हो' 'तुम मेरे हो'। इसके बाद तीसरी सीढ़ी है कि मैं और मेरा परमात्मा हम एक हैं 'तत्वमसि' तुम वह हो। जब ईसा जी ने कहा कि मैं और मेरा पिता प्रभु एक हैं तो उस समय वे उसमें लीन होकर कह रहे थे। जब वे कहते थे कि यह मेरी शक्ति नहीं बल्कि यह तो मेरे पिता परमात्मा की शक्ति है और वह ही सब कुछ ठीक करने वाला है, सब कुछ देने वाला है, तो उस समय वे 'तुम मेरे हो' की अवस्था में से होकर कह रहे होते थे। यह सीढ़ियों वाली अवस्था केवल बातें करने के लिए नहीं है, केवल बोलने के लिए नहीं है बल्कि इसे कमाना होता है और इस अवस्था की प्राप्ति करनी होती है।

महापुरुषों व ब्रह्मज्ञानियों की जीवनियों को पढ़ना अत्यन्त लाभप्रद हो सकता है जिस समय कि तुम आत्म मार्ग पर चल रहे होते हो। इन जीवनियों को पढ़कर तुम्हें भक्ति-भाव का पता चलता है। वास्तव में किसी भी मार्ग पर चलने के लिए 'प्रेम भाव' का होना अत्यावश्यक है। जीवन को खुशहाल बनाने के लिए, सकारात्मक बनाने के लिए, सृजनात्मक बनाने के लिए, आवश्यकता है प्रेम - प्यार की। प्यार क्या है? सर्वोत्तम निर्मल संवेग है - प्यार। सर्वाधिक सकारात्मक संवेग है - प्यार। सांसारिक तौर पर यह दिल की एक प्रकार की तीव्र इच्छा है जिसे कि मिटाया नहीं जा सकता है। इस संवेग को शब्दों की सीमित सीमा में बाँधा नहीं जा सकता है। उस प्यार की गर्माहट को जिसे कि तुम अपने अन्दर महसूस करते हो, प्रकट नहीं किया जा सकता है, दिखलाया नहीं जा सकता है, लेकिन एक बात जरूरी है कि उस प्यार को स्वार्थ के साथ जोड़ा नहीं जाना चाहिए। यदि तुम्हें दूसरे व्यक्ति से कुछ स्वार्थ सिद्धि चाहिए तो फिर तुम उसे प्यार नहीं कर रहे हो क्योंकि प्यार में लेना नहीं बल्कि देना ही देना होता है। प्यार करने वाला तो केवल देना ही जानता है वह लेने में तो विश्वास ही नहीं करता है। जब हम केवल देते ही जाते हैं तो फिर यही प्यार कहलाता है।

लेकिन हम लोग अपने दैनिक जीवन में क्या करते हैं? पत्नी उम्मीद करती है कि पति मुझे प्यार करे, पति उम्मीद करता है कि पत्नी मुझे प्यार करे लेकिन तुम यह जानते हो कि यह प्यार नहीं है बल्कि यह तो एक उम्मीद है और उम्मीद या आशा ही सबकी, सारे संतापों या दुखों की, जननी है। यह हमें सीखने की जरूरत है कि प्यार करो लेकिन उम्मीद मत रखो लेकिन यदि तुम आशा के बिना नहीं रह सकते हो

तो फिर उम्मीद कम रखो और प्यार अधिक करो। प्यार करके बहुत अधिक फल की उम्मीद मत रखो। प्यार का फल मरने के बाद ही प्राप्त होता है, जीवन में नहीं। प्यार करने वाला जो चुपचाप अपना सब कुछ दे देता है वह अगले जन्म की तो बात ही नहीं करता है, वह तो यहीं पर मुक्त है। जब तुम अपनी भावनाओं को दिशा देना सीख लेते हो और अपनी भावनाओं की शक्ति को समझ लेते हो तथा जब तुम प्यार करना सीख लेते हो तो फिर एक बात शेष रह जाती है और वह है - समर्पण। तुम्हारे पास जो कुछ भी है उसे समर्पित करो यानि कि यह भी तेरा है, यह भी तेरा है, यह भी तेरा है। वास्तव में तुम्हारी अर्न्तात्मा उसी समय जागृत होती है जब तुम आत्म समर्पण कर देते हो, और बिल्कुल खाली हो जाते हो तथा सत्य को जान लेते हो।

क्या तुम जानते हो कि बांसुरी किस तरह की होती है? यदि उसमें कोई छोटी सी तीली या कोई घास-फूस लगा दें तो फिर वह बजेगी ही नहीं। तुम कहोगे कि मेरे अन्दर तो बहुत सारे अवगुण हैं, कजोरियाँ हैं। तुम्हें इन्हें अपने अन्दर से निकालना होगा क्योंकि तुम्हारे अन्दर सत्य का निवास तभी होगा जब तुम अपने अन्दर, कुछ भी रहने नहीं दोगे और तुम्हें यही करने की जरूरत है। तुम्हें कभी भी कोई ऐसा प्राणी नहीं मिलेगा जो कि सम्पूर्ण हो, वास्तव में मनुष्य अधूरा ही है, तुम्हें आवश्यकता है समर्पण को सीखने की। समर्पण किस प्रकार किया जाता है? कभी भी अपने अन्दर नकारात्मक विचार मत आने दो, कभी भी आत्म ग्लानि मत करो, यह मत कहो कि मुझे तो कुछ भी नहीं आता है, मुझे अक्ल नहीं है, मैं अनजान हूँ, मैं दोषी हूँ, मैं कमजोर हूँ। यह कहकर दुखी मत होओ। तुम्हें यह कहने का अधिकार ही नहीं है, तुम तो केवल समर्पण ही करो और सत्य को मानकर चलो। सत्य को सामने रखकर जीवन के आनन्द को उठाओ। यही साधना है, यही अध्यात्मिक अभ्यास है, यहाँ भी और आगे भी।

अपनी भावनाओं को सकारात्मक बनाकर उनका प्रयोग करना सीखो। इसी को जीवन जीने की कला कहते हैं। मानवता को प्यार करना सीखो। सवाल पैदा होता है कि जो मानवता से प्यार करता है, उसके चिन्ह क्या होते हैं? मानवता को प्यार करने वाला सब कुछ मानवता को ही दे देता है। यदि तुम एक बार ऐसा करना शुरू कर दो, तो फिर तुम उसके बिना रह ही नहीं सकते हो। फिर तो भले ही संसार तुम्हें कितना ही दुखी करे, तुम्हारे लिए वह सारा दुख, सुख ही बन जाता है। तुम उसमें से भी आनन्द ही लेते हो। वह दर्द तुम्हारे लिए सुख का ही कार्य करता है क्योंकि तुम तो उससे परे जा चुके हो, ऊपर उठ चुके हो। फिर तुम्हारे जीवन में एक समय आता है कि जो तुम्हें आज दुखदाई लगता है, दुखद महसूस होता है, फिर वही, दुखी करने वाला महसूस ही नहीं होता है। जब तुम आनन्द की अवस्था में पहुँच जाते हो फिर तो कोई दुख रहता ही नहीं है। दुख क्या है? दर्द क्या है? मरना क्या है? यदि कोई मुझे मारना चाहता है तो वह मुझे मार नहीं सकता है। वह मेरा शरीर तो ले सकता है लेकिन इससे अधिक वह कुछ भी नहीं कर सकता है। शरीर एक कपड़े से अधिक कुछ भी नहीं है। फिर कोई, मुझे कैसे मार सकता है? कोई अजर, अमर को कैसे मार सकता है? मौत को ललकारो कि हे मौत! तेरे पास कोई शक्ति नहीं है कि तुम मुझे दुखी कर सकती हो। मुझे अपनी गोद में ले लो। मुझे समाधिस्थ कर दो। इस प्रकार से मृत्यु एक समाधि बन जाती है, फिर कोई भी दुख या दर्द नहीं रह जाता है।

सीखो! मानवता के प्यार करना सीखो। इस प्रकार के मनुष्य के चिन्ह हैं - निःस्वार्थी होना। अतः निःस्वार्थी बनो। संसार के बड़े मनुष्य निःस्वार्थी ही हुए हैं। इस प्रकार के मनुष्य दूसरों के लिए ही करते हैं। वास्तव में वे दूसरों के लिए ही जीते हैं, इसी को इहलोक व परलोक में मुक्ति कहते हैं। भावनाओं को समझकर उनका विश्लेषण करके, उन्हें सकारात्मक दिशा देकर उनकी शक्ति के माध्यम से सृजनात्मक बनकर हम सफल जीवन जी सकते हैं। इतना नहीं बल्कि फिर हम अधयात्मिक तौर पर भी उच्चावस्था पराप्त कर सकते हैं।

'चलता'

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 21 मार्च, दिन वीरवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - चेति, 14 मार्च, दिन वीरवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यिूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine
S/B A/C No. 12861000000003 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 RTGS/IFSC Code - PSIB0021286
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank SB A/C No. 0779000100179603
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 Branch Code - 077900, Swift Code - PUNBINBBMOH

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार **Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901** पर भेजने की कृपा करें। यदि **Online** राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर **SMS** भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone ..... E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. डा. जतिन्दर सिंह तथा डा. कोमलप्रीत कौर	दाँतों के विशेषज्ञ	मंगलवार
8. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
9. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
10. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
11. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार
18. बीबी वरश प्रभा	फिजियोथैरपिस्ट	सोमवार तथा शुक्रवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी जत्थे समेत गुरुद्वारा दुखनिवारन साहिब, सरी (कनाडा) में संगत को कीर्तन द्वारा कृतार्थ करते हुए।

पाठकगणों को सविनम्र निवेदन –

आओ! आत्म मार्ग के पथिक बने रहने की प्रतिज्ञा करें।

कलम के धनी, प्यार के सागर व आत्म मार्ग मैगजीन के संचालक श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी आत्म मार्ग कार्यालय में, जो कि रतवाड़ा साहिब में स्थित है, मैगजीन के लिए अनुभवी प्रवचन लिखते हुए।

जो भविष्य में जिज्ञासुजनों का मार्ग दर्शन करते रहेंगे।

नाम-वाणी की विचार आत्मा की खुराक है। जिस प्रकार से शरीर को जीवित रखने के लिए खुराक है। जिस प्रकार से शरीर को जीवित रखने के लिए भोजन रूपी आहार की आवश्यकता है ठीक उसी प्रकार से आत्मा को बुलन्दावस्था में रखने के लिए नाम रूपी आहार की नितान्त आवश्यकता है। आप सभी सुधी व सहृदय पाठकगणों को इस नाम रूपी आहार की पूर्ति 'आत्म मार्ग' रूहानी पत्रिका के माध्यम से काफी लम्बे समय से हो रही है। इस मंजिल के पथिक बने रहने के लिए अपनी आजीवन सदस्यता (लाइफ मेंबरशिप) का पुनर्नवीनीकरण (रिन्युवल) करवाने की कृपा करें।

आत्म मार्ग मैगजीन, रूहानियत की सुगन्ध को बिखेरता हुआ, आप जी के पास लगभग विगत वीस वर्षों से पहुँच रहा है। आप जी को, महापुरुषों, अन्य सबुद्धिजीवियों तथा अन्य आत्म मार्ग में रंगे हुए गुरुमुख प्यारों के अनुभवी प्रवचनों को पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आत्म मार्ग संस्था की यह हार्दिक इच्छा है कि इस रूहानी खुशबू को आप तथा आप जी का परिवार और अधिक लम्बे समय तक प्राप्त करता रहे। इस सम्बन्ध में आप जी को सविनम्र निवेदन है कि आप जी के मैगजीन की सदस्यता (मैंबरशिप) बीस वर्षों के बाद समाप्त हो रही है/गई है। कृपा करके 'आत्म मार्ग' का अगला साथ निभाने के लिए आजीवन सदस्यता (लाइफ मैंबरशिप) रु. 3000/- (देश) तथा $ 600 US DOLLAR (विदेश) के साथ पुनर्नवीनीकरण (रिन्युवल) करवा कर आत्म मार्ग के पथिक बने रहने का गौरव प्राप्त करने की कृपा करें।

संस्था 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब

नोट - माया भेजने के लिए ब्यौरा व खाता संख्या विवरण मैगजीन के अन्तिम पृष्ठों पर दिया गया है।